चन्दामामा
अप्रैल १९६७
75 P

Chandamama
Press
VADAPALANI
MADRAS 26
OFFERS YOU...
FINEST PRINTING.-
Equipped with
PHOTO GRAVURE
KLIMSCH CAMERA
VARIO KLISCHOGRAPH-
-BLOCK MAKING
and a
host of Others....

चाँद उगा है, फूल खिला है
कदम गाछ तर कौन ?
नाच रहे हैं हाथी-घोड़े
ब्याह करेगा कौन ?

ताँती के घर बेंग बसा है
ढोंसा को है तोन्द !
खाता-पीता मौज उड़ाता
गाना गाता कौन ?

हँसी के इस फुहारे को छोड़ते ही करोड़ों-करोड़ शिशुओं के खिलखिलाते प्रफुल्लित चेहरे नजर के सामने उभर आते हैं।

प्रगतिशील भारत में शिशुओं के स्वास्थ्य को आकर्षक बनाये रखने के लिये 'डाबर' ने तरह-तरह के प्रयोग एवं परीक्षण के बाद–'डाबर जन्म-घूँटी' का निर्माण किया है।

# डाबर जन्मघूँटी

शिशुओं के सभी प्रकार के रोगों में व्यवहार की जाती है।

डाबर (डा. एस. के. बर्म्मन) प्रा. लि., कलकत्ता-२९

WPG

# चन्दामामा

अप्रैल १९६७

## देखा ... गेवाबॉक्स ऐसी तस्वीर झट उतार लेता है क्योंकि इसमें १/१०० वीं सेकन्ड स्पीड भी होती है।

गेवाबॉक्स में बल्ब, १/५० वीं सेकन्ड और १/१०० वीं सेकन्ड तीन स्पीड होती है। यही वह विशेषता है जिससे यह खेल की किसी भी विशेष स्थिति की तस्वीर, पिकनिक और पार्टी की किसी भी मुद्रा की तस्वीर उतार सकता है।

गेवाबॉक्स की अन्य विशेषताएँ भी अतुलनीय हैं :

- बढ़िया चौरस (६ सीएमx६सीएम) तस्वीरें उतारता है। जो दूसरे समकक्ष कैमरे से उतारी हुई तस्वीर से ५०% बड़ी होती है। इसके एन्लार्जमेंन्ट भी बढ़िया बनते हैं।
- चमकदार साफ़ आइ-लैवल व्यूफ़ाइन्डर
- २ एपर्चर (एफ़ ११ और एफ़ १६)
- मजबूत, बढ़िया इस्पात से बनी आकर्षक बॉडी।

गेवाबॉक्स को चलाना बहुत ही आसान है। आप सिर्फ़ 'क्लिक' कीजिए बाकी का काम गेवाबॉक्स खुद कर लेगा। मूल्य रु. ४४.००

फ़ोटोग्राफ़ी सीखिए, गेवाबॉक्स अपनाइए। फ़ोटोग्राफ़ी एक ऐसा शौक है जिससे आप किसी भी समय की स्मृतियों के चित्र-संकलन से एक अनोखा आनन्द प्राप्त कर सकते हैं।

गेवर्ट
# गेवाबॉक्स

गेवर्ट गेवाबॉक्स एक लोकप्रिय कैमरा है जो बढ़िया से बढ़िया तस्वीरें उतारता है।

१०० रु. जीतिए : इनाम जीतनेका विवरण 'एगफ़ा-गेवर्ट फ़ोटो गैलरी' नामक पत्रिका में मिलेगा। इस पत्रिका के ६ अंक मुफ़्त प्राप्त करनेके लिए १ रु. डाकखर्च के लिए इस पते पर भेजिए :

AGFA एगफ़ा-गेवर्ट इंडिया लिमिटेड, कस्तूरी बिल्डिंग, जमशेदजी टाटा रोड, बम्बई १.

Bensons-507-A Hin

FOR PRECISION IN...
Colour
Printing
By Letterpress...

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
कानून की बातें कुछ ऐसी उलझी हुई हैं कि कई बार निर्दोष भी दण्डित हो जाते हैं और दोषी निर्दोष घोषित किये जाते हैं।
पर अन्त में प्रायः न्याय ही होता है और सत्य की विजय होती है।...
यह सत्य, इस मास की पन्नालाल की कहानी में पूर्णतः निरूपित होता है।
वर्ष : १८ अप्रैल १९६७ अंक : ८
CHITRA

# भारत का इतिहास

१६०५ से पूर्व में पोर्चुगीज़ों को डच जीतने लगे। उन्होंने १६३९ में गोवा का घेरा डाला। १६५८ में लंका में पोर्चुगीज़ उपनिवेश, डच लोगों के आधीन हो गये। डच व्यापार के लिए भारत भी आये। उन्होंने गुजरात, कोरमण्डल तट, बेन्गाल, बिहार, ओड़ीसा में फेक्टरियाँ बनाईं। १७ वीं सदी में सुगन्धित द्रव्यों का सारा व्यापार उन्हीं की देखरेख में होता रहा। सुदूर-पूर्व में उन्होंने व्यापार इतना विस्तृत किया कि विजयनगर साम्राज्य के समय के व्यापारिक सम्बन्ध पुनः स्थापित हो गये। देश के भिन्न भिन्न भागों से नील, रेशम, सूती कपड़े, चावल, अफीम डचों के पास सूरत नगर में पहुँचा करते।

१७ वीं सदी में डच और अंग्रेज़ों में प्रतिद्वन्दिता बढ़ी। पोर्चुगीज़ों और अंग्रेज़ों में अगर कभी अनबन रही भी थी, तो धीमे धीमे वह ठीक हो गई थी। पोर्चुगीज़ों ने इन्ग्लिस्तान के राजा चार्ल्स द्वितीय को बम्बई उपहार में दिया। परन्तु अंग्रेज़ों के व्यापार को डच लोगों ने बढ़ने न दिया।

डच लोगों का प्रधान केन्द्र मलाया था और अंग्रेज़ों का भारत था। पर दोनों में भारत में होड़ हुई।

१६७२-७४ में डच लोगों ने अपने सूरत और अंग्रेज़ों की बम्बई के बीच कई बार यातायत के मार्ग भग्न किये। बंगाल की खाड़ी में उन्होंने तीन अंग्रेज़ी नौकायें पकड़ लीं। १७५९ तक दोनों पक्षों के बीच व्यापार में प्रतिद्वन्दिता और भी बढ़ गई।

अंग्रेज़ों की ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने पहिले पहल १६०८ में फेक्टरी स्थापित करने का प्रयत्न किया। कम्पनी की तरफ़

से केप्टिन हाकिन्स १६०९ में जहाँगीर के दरबार में आया। सूरत में अंग्रेज़ों की फेक्टरी स्थापित करने के लिए उसने बादशाह की अनुमति भी ले ली। परन्तु सूरत के व्यापारी और पोर्चुगीज़ों ने बादशाह की अनुमति का उलंघन किया। १६११ में हाकिन्स आगरा से निकला। जब सूरत पहुँचा तो सर हेनरी मिड़लटन ने तीन जहाज़ों में आकर सूरत के व्यापारियों को भयभीत किया। उन्होंने १६१२ में केप्टेन बेस्ट को दो जहाज़ लेकर वहाँ आने दिया। जब पोर्चुगीज़ ने युद्ध किया तो केप्टेन बेस्ट ने उनको हरा दिया। अंग्रेज़ों को स्थाई तौर पर फेक्टरी के निर्माण की अनुमति देते हुए १६१३ में जहाँगीर ने फरमान निकाला।

तुरत ब्रिटिश राजा की ओर से एक दूत मुगल दरबार में पहुँचा और उसने व्यापारिक सन्धि करने की कोशिश की। इस दूत का नाम था सर थोमस रो। यह १६१५ के अन्त से १६१८ के अन्त तक, मुगल दरबार में रहा। वह व्यापारिक सन्धि पर हस्ताक्षर करवाने में तो सफल न हो सका। परन्तु कई जगह फेक्टरियाँ बनाने की और व्यापारिक सुविधायें प्राप्त करने की बादशाह से अनुमति पाने में वह सफल रहा। इसके फलस्वरूप सूरत, आगरा, अहमदाबाद, भरूच में अंग्रेज़ फेक्टरियाँ खुल गईं।

अंग्रेज़ राजा ने बम्बई को, जो उसे उपहार के रूप में मिला, दस सोवरीन सालाना किराये पर कम्पनी को दे दिया। कुछ ही वर्षों में बम्बई बड़ा शहर बन गया। सूरत से भी बड़ा हो गया। यह पश्चिमी तट पर अंग्रेज़ों का सब से बड़ा व्यापारिक केन्द्र हो गया।

पूर्वी तट पर अंग्रेज़ों ने मछलीपट्नं में १६११ में एक फेक्टरी बनाई। गोलकोन्डा के लिए वह मुख्य बन्दरगाह था। सालाना ५०० पगोड़ा (१७५० रुपये) कर देकर गोलकोन्डा राज्य के बन्दरगाहों में यथेच्छ व्यापार करने के लिए एक फरमान द्वारा गोलकोन्डा के सुल्तान ने १६३४ में, कुछ शर्तों के साथ अनुमति दी। परन्तु स्थानीय अधिकारी अंग्रेज़ों से पैसा लेते आये थे। इसलिए वे एक और बन्दरगाह खोजने लगे।

१६३९ में चन्द्रगिरि के राजा ने मद्रास को अंग्रेजों को ठेके पर दिया। वहाँ इन्होंने एक फेक्टरी बनाई। यही फोर्ट सेन्ट ज्यार्ज था। इस किले के निर्माण के बाद मछलीपट्नं की प्रमुखता जाती रही और मद्रास की प्रमुखता बढ़ी।

ब्रिटिश लोगों का दबदबा बढ़ने लगा। १६३३ महानदी की डेल्टा में हरिहरपुरं के पास और बलासर के पास उन्होंने नई फेक्टरियाँ बनाई। १६५१ में ब्रिजमेन की देखरेख में उन्होंने हुगली में एक और फेक्टरी बनाई इसके बाद पटना और कासीम बाज़ार में भी फेक्टरियाँ उन्होंने बनाईं।

इन दिनों ब्रिटिश लोग बेन्गाल में मुख्यतः रेशम, सूती कपड़े, शकर आदि का व्यापार करने लगे। १६५८ तक बेन्गाल, बिहार, उड़ीसा कोरमण्डल के तट पर, जितनी ब्रिटिश फेक्टरियाँ थीं, वे सब सेन्ट ज्योर्ज के आधीन हो गईं।

# नेहरू की कथा

[३३]

छ महीने की सज़ा भुगतने के बाद जवाहरलाल नेहरू को ११ ओक्टोबर को छोड़ दिया गया। देश की आर्थिक और राजनैतिक परिस्थिति को देखकर कर न देने का आन्दोलन उन्होंने प्रारम्भ करना चाहा।

सत्याग्रह जारी था। लोग जेल जा ही रहे थे। पर आन्दोलन में विशेष गति न थी। इसलिए जवाहर ने कर न देने का आन्दोलन शुरु किया।

अलहाबाद में जिला के किसानों की सभा हुई। जवाहरलाल ने उसमें भाषण किया। सरकार ने फिर उन्हें जेल भेज दिया। वे बाहर केवल आठ दिन ही रहे थे। उनके फिर जेल जाने से आन्दोलन में कुछ चुस्ती आ गई।

मोतीलालजी अपने स्वास्थ्य का बिना ख्याल किये, राजनैतिक क्षेत्र में उतर गये। उनकी वजह से भी आन्दोलन में नये प्राण से आ गये।
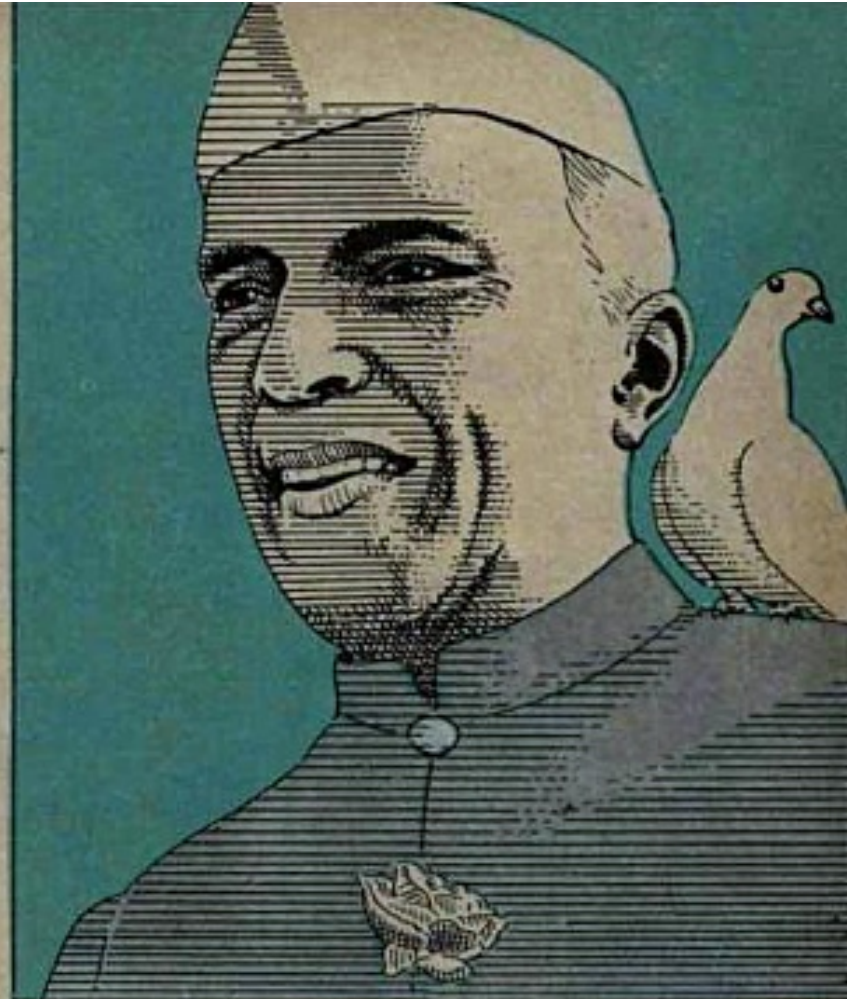
जवाहरलालजी का जन्म दिन (१४ नवम्बर) सारे देश में मनाया गया। सभायें हुईं, लाठी चार्ज हुईं। सारे देश में पाँच हज़ार आदमी एक साथ गिरफ्तार हुए।

१ जनवरी १९३१ में जवाहरजी की पत्नी कमला भी जेल गईं।

अगले मास फरवरी ६ के दिन मोतीलालजी का देहान्त हो गया।

भारत की समस्या का परिष्कार करने के लिए ब्रिटिश लोगों ने लन्डन में एक गोल मेज कान्फरेन्स की अयोजना की। उसमें उदारदल के प्रतिनिधियों का व्यवहार
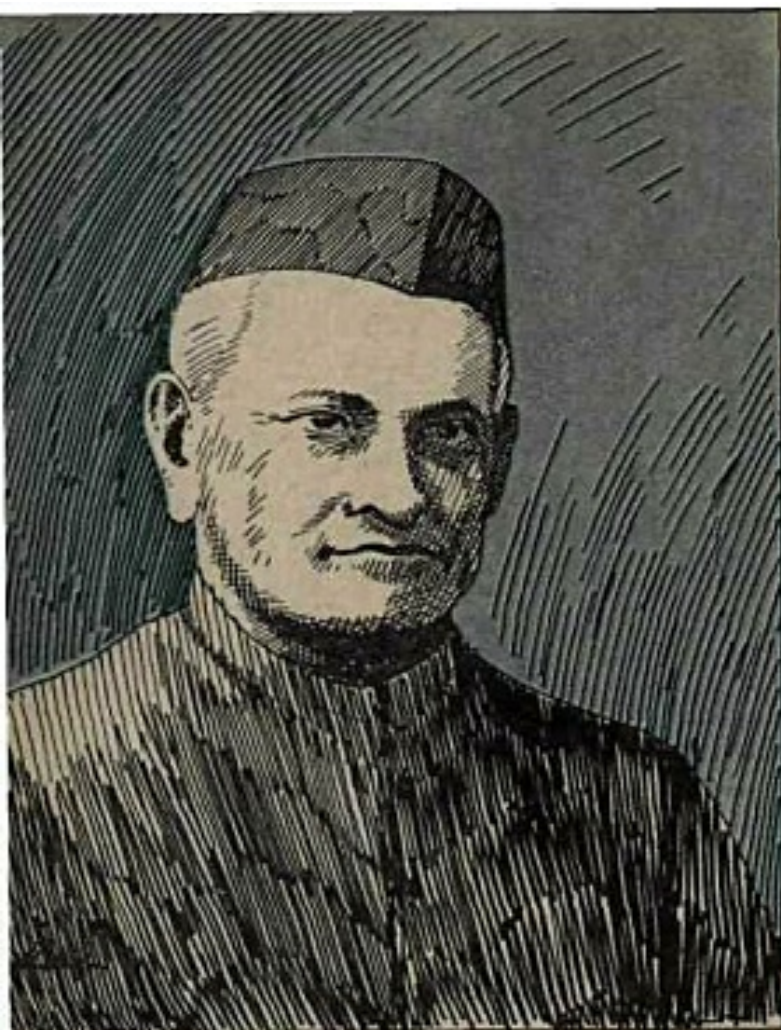
प्रशंसनीय न था। सिवाय बड़े बड़े अधिकारियों के साथ गप्प लगाने के उनका कोई और काम न था। जैसा कि जवाहर ने कहा है, भारत की ओर से बोलने का अधिकार केवल महात्मा गान्धीजी को ही था।

गान्धी इर्विन समझौते के बाद, दूसरी गोल मेज कोनफरेन्स के लिए कोन्ग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में गान्धीजी गये।

कोन्ग्रेस के नेताओं को कोई उमीद न थी कि इस कानफरेन्स से कोई विशेष लाभ होगा। गान्धीजी खाली हाथ लौट आये।

इस बीच सरकार ने बहुत-से नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। उनमें जवाहर भी थे।

दूसरी गोल मेज की कान्फरेन्स ब्रिटिश की विजय तो थी ही, पर इसके साथ भारतीयों का मजदूर दल में विश्वास भी जाता रहा। यह जवाहर के लिए अच्छा सबक था।

उन्होंने अनुमान किया कि जो कुछ संसार में हो रहा था, उसका भारत की परिस्थितियों से सम्बन्ध था। सुदूरपूर्व में जापान, चीन को खोंस रहा था। यूरुप में फासिज़्म फैल रहा था। सोशल डेमोक्रसी का ह्रास हो रहा था। जवाहर ने साम्राज्यवाद और फासिज़्म की निन्दा की उनके विचार में भारत के साम्राज्यवाद और पूंजीवाद शत्रु थे। राष्ट्रवादी, प्रचलित वर्ग व्यवस्था में कोई परिवर्तन न लाना चाहते थे। जवाहर उनसे आगे बढ़े।

"संसार आज पहिले से बहुत सम्पन्न है। पूँजीवादियों के कारण ही, क्रित्रिम

अभाव पैदा हो रहे हैं। यह पूँजीवाद अधिक दिन न रहेगा। भविष्य कुछ भी हो, पुरानी व्यवस्था खतम हो गई है और यह वापिस न आयेगी।"

१९३२-३५ के बीच में, हिटलर का बोलबाला बढ़ा। उस समय जर्मनी के बहुत से विद्वान वैज्ञानिक जेल में थे। उसी समय भारत में भी कई विद्वानों का जेल में होना उल्लेखनीय है।

यह सारा समय जवाहर ने जेल में ही बिताया। वे अकेले ही नहीं उनका सारा कुटुम्ब ही जेल हो आया था। मोतीलालजी की पत्नी भी अपने बुढ़ापे में जेल गईं। विजयलक्ष्मी पंडित और उनके पति भी जेल गये। कमला नेहरू ने जेल में थीं ही।

कमला तपदिक से बीमार थीं। जब उनकी बीमारी बढ़ी तो १९३५ में उनको छोड़ दिया गया और साथ जवाहरलाल नेहरू को भी छोड़ दिया गया। ये दोनों जर्मनी के एक स्वास्थ्य केन्द्र में गये। वहाँ कमला नेहरू का स्वास्थ्य कुछ सुधरा।

१९३५ के ओक्टोबर के अन्त में जवाहरलाल नेहरू इन्गलेन्ड गये। वहाँ

उनका खूब स्वागत किया गया। उन्होंने वहाँ कई सभाओं में भाषण किये। उन्होंने कहा कि ब्रिटिश पार्लमेन्ट के निपुण सदस्य निरे अनाड़ी थे, वे भारत के वास्तविक स्थिति से नितान्त अपरिचित थे। ब्रिटिश जब तक अपनी नीति नहीं बदलेंगे, तब तक देश में शान्ति न होगी। ब्रिटिश के लिए यह हितोपदेश उसी तरह थे, जिस तरह बहरे के सामने शंखनाद होता है।

जवाहर जब लन्डन में इस प्रकार के भाषण कर रहे थे, वे भारत में कोन्ग्रेस के

अध्यक्ष चुन लिये गये। इसीलिए वे भारत के बारे में सब जगह अधिकारपूर्वक बात कर सके।

फैजपुर, लखनऊ के काँग्रेस के अधिवेषनों में जवाहरजी के अभिमतों का समर्थन किया गया। ब्रिटिश द्वारा बनाये गये, विधान की आलोचना की गई।

इस बीच कमला २५, फरवरी १९३६ में दिवंगत हो गईं। सारे भारत में उनकी मृत्यु पर शोक मनाया गया।

"कमला नेहरू का निधन देश के लिए एक ऐसी क्षति है, जिसकी पूर्ति करना असम्भव है।" गान्धीजी ने कहा।

११ मार्च, १९३६ में जवाहरलाल स्वदेश वापिस चले आये।

१९३६ में लखनऊ का कान्ग्रेस अधिवेषन जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुआ। यह मुख्य अधिवेषन था। "पूंजीवाद ने अब फ़ासिज़्म अख्तियार किया है। जो नीति साम्राज्यवादी, उपनिवेषों में बरत रहे हैं, फासिस्ट अपने देशों में बरत रहे हैं। दोनों एक है...." जवाहरलालजी ने अपनी अध्यक्षीय भाषण में कहा।

ब्रिटिश के कुछ प्रान्तों में स्वायत्त शासन अमल में ला रहे थे। काँग्रेस ने चुनाव में भाग लेने का निश्चय किया।

पद स्वीकरण की समस्या का समाधान, चुनाव के बाद करना था, उसके लिए एक अलग अधिवेषन भी होना था।

जवाहर के साम्यवाद के समर्थन के कारण कुछ हलचल हुई। उन्होंने अपने विरोधियों से कहा—"यदि सामाजिक सुधार न हुए तो क्रान्ति होकर रहेगी।

# पाताल दुर्ग

[ ११ ]

[ विरूप की सहायता से, धूमक गरुड़ के चुँगल से जा निकला। फिर उनको जंगल में एक विकृत आकृति का पुरुष दिखाई दिया। उसके बताये हुए रास्ते पर जब वे गये, तो धूमक और उसके मित्रों ने नदी में नाव देखी और उसके चारों ओर मगरों को मँडराते हुए देखा। सोमक ने एक मगर पर बाण मारा। बाद में—]

सोमक का बाण लगते ही मगर पानी में तिलमिलाने लगा। छटपटाने लगा। इस तरह छटपटाने से, ऊपर की मगर की खाल जाती रही और एक मानव आकृति प्रत्यक्ष हुई।

जो मगर तब तक नाव के चारों ओर मँड़रा रहे थे, अपनी खालें फेंककर, चिल्लाते, चीखते, किनारे की ओर तैरने लगे। वे मगर नहीं थे। पर मगर का वेष पहिने ताकतवर आदमी थे।

सोमक ने यह दृश्य देख चकित होते हुए कहा—"विरूप! क्या तुम्हें यह देखकर अचरज नहीं हो रहा है? ये मगर मनुष्य कौन हैं? यह नाव किसकी है?"

धूमक ने उससे धीमे बात करने के लिए कहा—"मरने से पहिले, जो उस विकृत आकृतिवाले ने कहा था, क्या वह भूल गये हो? ये कालकलि राक्षस के भट हैं। नाव के पास ताकि कोई न आ सके, इसलिए वे मगर का रूप धरे हुए हैं? उनमें से एक को मारकर हम आफ़त में पड़नेवाले हैं। वे सब किनारे पर पहुँचकर, हमारे पेड़ों की ओर ध्यान से देख रहे हैं।"

"हाँ, भाई, बाण छोड़ने से पहिले, मुझे सन्देह हुआ कि वे मनुष्य थे। पर मेरे कहने से पहिले सोमकजी ने बाण छोड़ ही दिया। अब क्या किया जाय? वे हमारी तरफ़ आ रहे हैं।" विरूप ने कहा।

धूमक एक क्षण तो चुप रहा, फिर उसने यूँ सिर हिलाया, जैसे किसी निश्चय पर आ गया हो।

"इन लोगों ने यह तो जान लिया है कि बाण किस तरफ़ से आया था, पर उनको यह नहीं मालूम है कि हम यहाँ पेड़ों पर बैठे हैं। उनके आने से पहिले चलो हम पेड़ों से उतरकर, झाड़ियों के पीछे मोड़ के पास के झुरमुट में चले जायें।" धूमक ने कहा।

तुरत तीनों पत्तों को बिना हिलाये विलाये बहुत होशियारी से नीचे उतरे, झाड़ियों के पीछे पीछे कुछ दूर गये और पेड़ों की झुरमुट के पास पहुँच गये।

इतने में, मगर मनुष्य दो टुकड़ियों में बँट गये। एक टुकड़ी उस पेड़ की ओर गई, जिसे धूमक वगैरह तभी छोड़कर आये थे और दूसरी टुकड़ी हथियार आदि लेकर, दूसरी ओर से पहाड़ की मोड़ की ओर आने लगी।

"धूम....ये राक्षस....बीस से अधिक मालूम होते हैं और हम तीन हैं, अच्छी आफ़त आ पड़ी है।" सोमक ने दान्त पीसते हुए कहा।

"क्या बिना कष्ट झेले, हम राजकुमारी कान्तिसेना को छुड़ाकर ला सकेंगे? तुम्हारे साहस और बहादुरी पर मुझे किसी प्रकार का भी सन्देह नहीं है। अगर ज़रूरत पड़ी तो हम दस आदमियों को मार मूरकर क्या पहाड़ पर नहीं भाग सकते हैं?" धूमक ने तलवार निकालकर जोश में कहा।

विरूप ने अपना भाला मज़बूती से पकड़ लिया। सोमक ने धनुष पर बाण चढ़ाकर धूमक की ओर देखा मगर मनुष्य अपने हाथ के भालों से झाड़ियों में टटोलते, पेड़ों पर भाले भोंकते, चिल्ला रहे थे। "कौन हो तुम? एक हो या दो हो? बाहर निकलो, जीते जी हमसे छूटकर नहीं भाग सकते। कालकलि राक्षसेन्द्र के एक मानव सैनिक को मारने का क्या प्रतिफल होगा जानते हो? तुम्हारी चमड़ी उखाड़ दी जायेगी।

धूमक और दोनों को खबरदार करके, अपनी ओर आते मगर मनुष्यों से बचने के लिए पहाड़ की मोड़ की ओर जाने लगा।

मगर मनुष्यों में से एक ने धूमक की ओर देखते हुए कहा—"देखो, वहाँ झाड़ी हिल-सी रही है। मुझे सन्देह हो रहा है कि जिन लोगों ने हमारे आदमी को मारा है वे उस झाड़ी के पीछे हैं।" वे उस तरफ़ जाने लगे।

विरूप जान गया कि उन पर क्या बीतनेवाली थी। उसने धूमक और सोमक

न खाले, वह रेंगता रेंगता ही पीछे जाने लगा।

"शेर....पीछे हटो।" एक मगर मनुष्य ने कहा।

"यह मामूली शेर नहीं है। बड़ा भूखा शेर मालूम होता है।" एक और ने कहा।

"तुम्हारी अक्ल मारी गई है। पहिले झाड़ियों से दूर भागो। यह ऐसी शेरनी मालूम होती है, जिसने अभी बच्चे दिये हैं? उसके चिल्लाने से तुम नहीं जान सकते?" एक और ने कहा।

को आगे आने के लिए कहकर, वह अपने घुटनों के बल झुका, जिस झाड़ी के पीछे वह छुपा था, उसे झकझोरते हुए वह जोर से चिल्लाया।

जो जंगल में पलते हैं, बड़े होते हैं, वे जंगली जानवरों की तरह बोलना और चिल्लाना भी जान जाते हैं। विरूप इन बातों में बड़ा चतुर था। उसका शेर की तरह गरजना सुनकर, मगर मनुष्य, जो जहाँ था, वहाँ झट खड़ा हो गया। जो सबसे आगे था, वह गर्जन सुनकर औंधे गिर पड़ा, अगर उठा तो कहीं शेर

वे यूँ सोच रहे थे कि यही मौका देख, धूमक और उसके मित्र झाड़ियों के पीछे पीछे रेंगते हुए पहाड़ की ओर जाने लगे। यह सोच उनका ढाढ़स बढ़ा कि तब आफ़त टल गई थी।

सोमक ने विरूप के कन्धे थप थपाते हुए कहा—"विरूप! तुमने इन दुष्टों को खूब डरा दिया। देखो वे कैसे डर के मारे काँप रहे हैं।"

आगे चलते हुए धूमक ने मगर मनुष्यों को एक बार देखते हुए कहा—"इनकी तो बात तो खैर हो गई, अब दूसरे जत्थे

का क्या हुआ?" उसने उस पेड़ की ओर देखा, जिस पर से वे उतरकर आये थे। वह भय से काँपने लगा। उनमें से दो पेड़ की टहनी पर चढ़कर, आँखों के आगे हाथ रखकर ठीक उन्हीं की ओर देख रहे थे।

"सोमू....विरूप, वे जान गये हैं कि हम कहाँ हैं। थोड़ी देर में ये दोनों जत्थे मिल जायेंगे और हमारी खबर लेंगे। उस टहनी पर जो खड़े हैं क्या तुम्हें वे दिखाई दे रहे हैं?" धूमक ने पूछा।

धूमक अभी यह कह ही रहा था, टहनी पर खड़े दोनों आदमी चिल्लाये—"न शेर है, न वेर है। डरो मत। वे तीनों दुष्ट पहाड़ के पीछे छुपे हैं। उन्हें जंगल में न भागने दो। उनको यहीं से घेर लो, चलो।"

"हाँ....राक्षस के सेवको, तो तुम हमें देख रहे हो। उन दोनों को एक बाण से नीचे गिरा दूँगा।" कहते हुए सोमक ने धनुष पर बाण चढ़ाया।

"हाँ....पहिले एक बाण छोड़ो। वे डरकर पेड़ से उतर जायेंगे। तब कोई ऊँचाई से हमें भागता न देख सकेगा। न हमारे बारे में ही किसी और को बता सकेगा। समझे।" धूमक ने सोमक को उकसाया।

इस बीच सोमक ने निशाना लगाकर बाण छोड़ ही दिया। वह टहनी पर खड़े एक मगर मनुष्य की छाती पर लगा। वह चिल्लाकर नीचे गिरने को था कि गिरते गिरते, उसने पासवाले की कमर पकड़ ली। उसके यूँ पकड़ने से दूसरे आदमी के हाथ से टहनी फिसल गई और दोनों धड़ाम से नीचे जा गिरे।

CHITRA
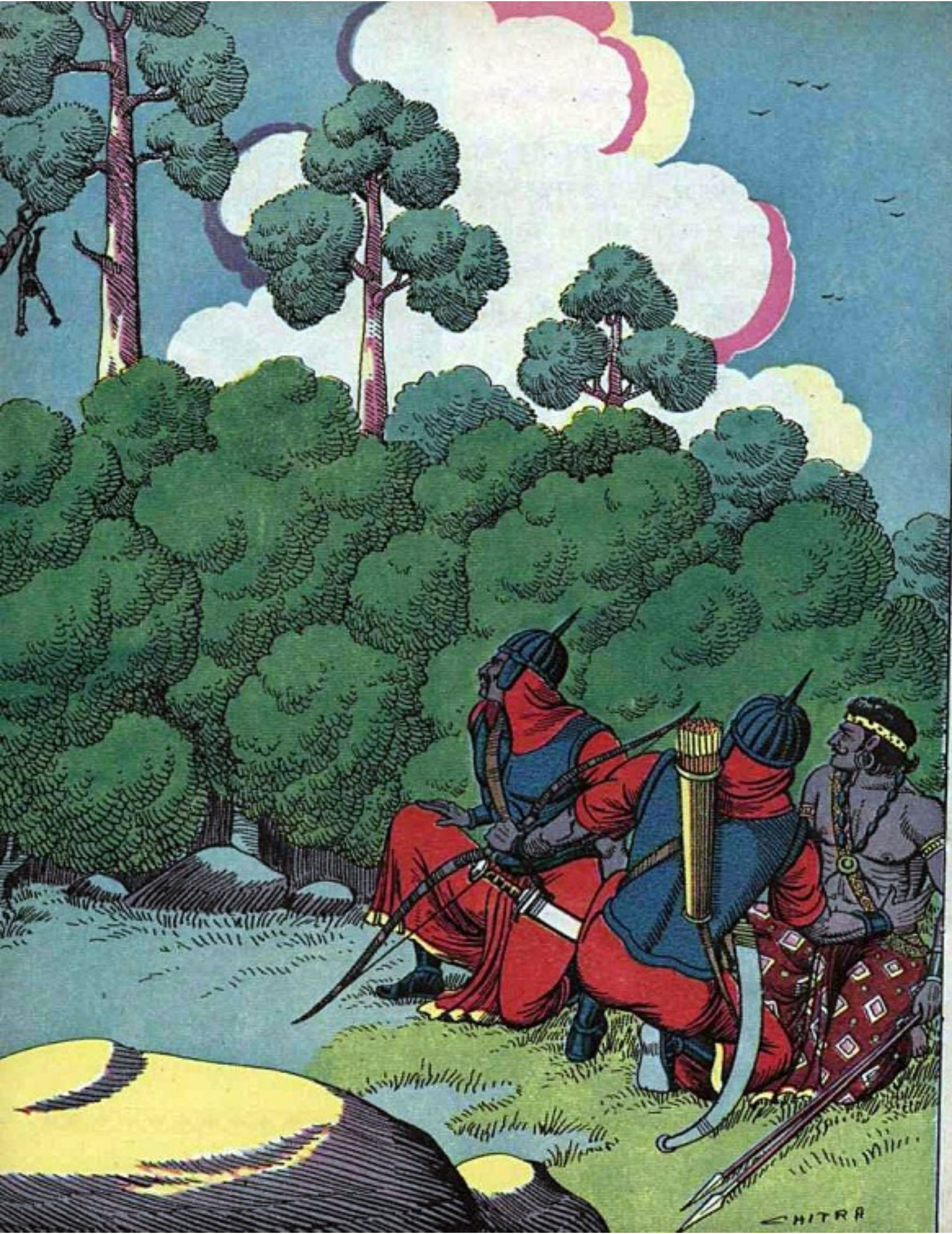
"एक बाण....और दो शिकार....!" विरूप जोर से चिल्लाया, उसे यह भी न ख्याल रहा कि चिल्लाने से उन पर आफ़त आ सकती थी।

"भागो....पहाड़ के मोड़ के बाद, घना जंगल है। अगर हम वहाँ तक भाग सके, तो ये राक्षस के सेवक हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। हमें यह देखना है कि वे हमारा रास्ता न रोकें, न हमें, पीछे से भालों से वे मार ही सकें।" धूमक ने कहा।

पहाड़ के मोड़ तक एक पगड़ंडी जाती थी। उस पगड़ंडी पर राक्षस के सेवक ही आया जाया करते थे। वे जब कभी गाँवों पर हमला करते थे, तो इसी रास्ते जाया करते थे।

धूमक और उसके मित्र उस रास्ते पहाड़ की ओर भागने लगे। उस मोड़ पर ही शत्रुओं की नाव, किनारे के पेड़ के तने से बँधी हुई थी।

जैसा कि धूमक का अनुमान था, शत्रुओं में से दोनों जत्थों ने मिलकर उनका पीछा न किया। उनमें से एक जत्था, पहाड़ की ओर भागने लगा। वहाँ धूमक का उनको रोकने का प्रयत्न करने का इरादा था और दूसरा जत्था, पीछे से उनके पीछे आने लगा।

धूमक ने इन दोनों जत्थों से बचकर भाग जाने की ठानी। वह रास्ते के लिए इधर उधर देखने लगा। पर कोई रास्ता न दिखा दिया। वहाँ इतने पत्थर और झाड़ी झँखाड़ थे कि कहीं पैर नहीं रखा जा सकता था। सिवाय जहाँ वह खड़ा था, वहीं खड़े होकर, डटकर, शत्रु का मुकाबला करने के धूमक के सामने कोई रास्ता न था।

"सोमू, जो हमें पीछे से खदेड़ रहे हैं, उन पर बाण छोड़ो, मैं और विरूप आगे रहकर, उनके भाले तुम पर नहीं लगने देंगे। जरा जल्दी करो।" धूमक ने कहा।

सोनक झट घुटनों के बल झुक गया, उसने मगर मनुष्य पर बाण छोड़ा। बाण के लगते ही, वह जोर से चिल्लाता नीचे जा गिरा। यही मौका देख, सोमक ने एक और बाण शत्रु पर छोड़ा। पर इस बार मगर मनुष्य की छाती पर न लगकर, उसके कन्धे पर लगा। वह चिल्लाकर औंधे नीचे गिर पड़ा। मगर मनुष्य डरकर भागने लगे।

"सोम....विरूप, पहाड़ की मोड़ पर जो हमें रोकने के लिए आ रहा है, उन पर भी इसी मन्त्र का उपयोग करना होगा। कहाँ हैं भाले जो शत्रुओं ने हम पर छोड़े थे।" कहकर धूमक वहाँ गिरे हुए दो भाले लेकर आगे भागने लगा। विरूप और सोमक भी कुछ भाले लेकर, उसके पीछे पीछे चले।

इस बीच, मगर मनुष्यों का दूसरा जत्था पहाड़ के मोड़ पर पहुँचा। भाले उठाकर अपनी ओर आते हुए धूमक आदि को देखकर उन्होंने कहा—"हथियार डाल दो। हम तुम्हें बिना मारे, कालकलि राक्षसेन्द्र के पाताल दुर्ग ले जायेंगे। अगर तुमने यह न किया, तो इस संसार में जान लो, तुम्हारी आयु पूरी हो गई है।" वे चिल्ला रहे थे।

(अभी है)

# चमरवाल

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। वह वापिस पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर कन्धे पर डाल हमेशा की तरह श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, तुमने यह काम किसी दुर्मुहूर्त में शुरु किया होगा। इसीलिए चमरवाल के शत्रुओं की तरह विजय नहीं प्राप्त कर पा रहे हो। ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो, मैं चमरवाल की कहानी सुनाता हूँ....सुनो।" उसने यूँ कहानी सुनानी शुरु की।

कभी, हस्तिनापुर पर बलशाली चमरवाल का राज्य था। उसके राज्य की सीमा पर पाँच राजा थे, जिनका नाम था, समरवल, समरशूर, समरजित, प्रतापचन्द्र, प्रतापसेन। चमरवाल की तुलना में वे छोटे थे।

## वेताल कथाएँ

क्योंकि उनके राज्य समीप थे, इसलिए वे चमरवाल के दबदबे में रहते। चमरवाल के वैभव के सामने वे छोटे मोटे सामन्त लगते थे। उनका छोटापन उनके लिए दुस्सह हो रहा था।

एक बार इन पाँचों ने एक जगह मिलकर सलाह मशवरा किया। "हम अकेले चमरवाल के सामने नहीं टिक सकते। वह हमारी बगल में भाले की तरह है। हम स्वतन्त्र राजा हैं, पर हम कोई ऐसा काम नहीं कर सकते, जिसे वह न चाहता हो। अगर हमने मिलकर उसका मुक़ाबला किया, तो वह हमारा सामना न कर सकेगा। हम लोगों का सम्मिलित बल उसके बल से कहीं अधिक है। वह हमारे सामने न टिक सकेगा। उसके हरा दिये जाने पर, हमारी मान मर्यादा में कोई कमी न रहेगी। तब हम वाक़ई स्वतन्त्र होंगे।" उन्होंने यह निश्चय किया।

उन्होंने एक ज्योतिषी को बुलाकर कहा—"हम पाँचों हस्तिनापुर पर युद्ध करने जा रहे हैं। इसके लिए आवश्यक मुहूर्त देखो।"

ज्योतिषी ने कुछ गिन गिना कर कहा—"इस वर्ष युद्ध के लिए कोई लाभप्रद मुहुर्त नहीं जान पड़ता है। इसलिए इस वर्ष युद्ध के बारे में न सोचना ही अच्छा है। अगर आप चाहते हैं कि कोई न कोई मुहूर्त निकाला ही जाये, तो मैं एक मुहूर्त निश्चित कर दूँगा। पर उसके कारण अपको पराजय ही मिलेगी।"

राजाओं को यह बात बिल्कुल न जंची। "जय पराजय की बात हम पर छोड़ दो। युद्ध के प्रयाण के लिए उचित क्षण बताओ।" उन्होंने कहा।

ज्योतिषी ने, जो उन हालात में अच्छा मुहुर्त हो सकता था, वह निश्चित करके उनको बताया।

उस मुहूर्त पर पाँचों राजा, अपनी सेनाओं को साथ लेकर, चमरवाल पर आक्रमण करने गये। उनकी सेनाओं में तीस हज़ार हाथी, तीन लाख घोड़े और करोड़ पदाति थे।

चमरवाल की सारी सेना थी, दस हज़ार हाथी, एक लाख घोड़े, बीस लाख पदाति मात्र। शत्रुओं की शक्ति उसकी शक्ति से कहीं अधिक थी। पर चमरवाल ने इसकी परवाह न की। महाशूर सैनिकों के साथ वह युद्ध के लिए निकल पड़ा।

युद्ध में उसने वह कौशल दिखाया कि तीन शत्रु राजाओं को उसने पराजित ही न किया, बल्कि उनको कैदी भी बना लिया। उनकी सेनायें तितर बितर होकर भाग भूग गईं। चमरवाल ने उनको कुछ दिन अपनी कैद में रखा फिर उनको छोड़ ही न दिया....बल्कि, उनके राज्य भी उनको वापिस कर दिये।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"चमरवाल की अपेक्षा, समरबल आदि

की शक्ति कई गुना अधिक थी। फिर भी वे क्यों हार गये? क्या इसलिए कि बिना अच्छे मुहूर्त के वे युद्ध करने के लिए निकले थे? या इसलिए कि चमरवाल उन सबसे अधिक पराक्रमशाली था। युद्ध भूमि में चमरवाल को सामने देख, उनका उत्साह ठंडा पड़ गया था? अगर तुमने इन सन्देहों का जान बूझकर निवारण न किया, तो तुम्हारे सिर के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"केवल एक जगह एकत्रित कर दिये जाने मात्र से छोटी सेनायें बड़ी नहीं हो जातीं। समरबल आदि युद्ध के लिए तो मिल गये थे, पर उन्होंने अपनी सेनाओं को मिलाकर उनको आवश्यक प्रशिक्षा न दी थी। जैसा कि ज्योतिषी ने कहा था, अगर वे एक वर्ष के समय में ऐसा करते, तो चमरवाल को पराजित कर सकते थे। यही नहीं, समरबल आदि ने सोचा था कि उनकी सम्मिलित सेना देखकर चमरवाल मैदान छोड़कर चला जायेगा। पर उसके युद्ध के लिए आने पर क्या किया जाये, उन्होंने यह न सोचा था, इसलिए ही वे एक एक करके हार गये थे। अगर पाँचों एक एक करके अलग युद्ध करते तो जो होता, वह ही हुआ। मुहूर्त ठीक था, या न था....इस बारे में सोचने की ज़रूरत नहीं है। चूँकि जहाँ तक मुहूर्त का सम्बन्ध है, वह बात चमरवाल पर भी लागू होती थी। परन्तु वह युद्ध में विजयी हुआ।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

# पूर्णदास

पूर्णदास का पिता मोहिनीवाल रियासत में एक कर्मचारी था। दरबार पुराने तरीके से चलता था। महाराजा की पाश्चात्यों के बारे में अच्छी राय न थी। उनकी बनाई हुई रेलें और टेलिग्राफ लाइनें देखकर उसे बड़ा गुस्सा आता था।

परन्तु पूर्णदास का पिता जानता था कि पुराना जमाना लद गया था। उसने अपने लड़के को अंग्रेज़ी शिक्षा दिलवाई।

पूर्णदास बम्बई विश्वविद्यालय में पढ़ा। फिर उसी रियासत में कर्मचारी बना। उसने महाराजा के पुराने ख्यालातों में कहीं खलल न होने दी।

एक एक तरक्की की सीढ़ी पर चढ़ता वह अन्त में दिवान बन गया। सच कहा जाय, दिवान के अधिकार अधिक होते हैं, बजाय राजा के।

पुराने राजा के मर जाने के बाद नया महाराजा आया। पूर्णदास के गौरव में वृद्धि हुई। चूँकि नये महाराजा ने अंग्रेज़ ट्यूटर से अंग्रेज़ी सीखी थी उसे अंग्रेज़ों से खिझ न थी।

नये महाराजा के नाम पर पूर्णदास ने लड़कियों के लिए पाठशाला खुलवाई, सड़कें बनवाईं, कृषि के उपकरणों का प्रदर्शन करवाया।

यह सब देख, इन्लेन्ड की सरकार और भारतीय सरकार को बड़ी खुशी हुई। पूर्णदास की वायसराय, गवर्नर और अन्य अंग्रेज़ कर्मचारियों से मैत्री हो गई। उसे इन्लेन्ड से निमन्त्रण आया। वहाँ, उसका

विश्व विख्यात पुरुषों से परिचय हुआ। उसने वहाँ भाषण दिये। वह वहाँ बड़ा प्रसिद्ध हुआ।

स्वदेश आकर प्रायश्चित्त करने के लिए उसने बड़े पैमाने पर रुपया खर्च किया। ज़रूरी कर्मकाण्ड किये।

पूर्णदास की इन्लेन्ड की यात्रा के फलस्वरूप महाराजा को एक खिताब और पदक भी मिला। वायसराय ने स्वयं आकर महाराजा और पूर्णदास को ये खिताब दिये। पूर्णदास इस खिताब के कारण सर पूर्णदास के. सी. आई. ई. हो गया।

इसके एक महीने बाद पूर्णदास ने सब कुछ छोड़ छाड़कर सन्यास ले लिया। जो कल तक दिवान था, वह डण्डा, कमण्डल, आसन लेकर अपना पद, सम्पत्ति छोड़कर चला गया।

इस तरह चला जाना, पूर्णदास के अंग्रेज़ मित्रों को समझ में न आया। परन्तु पूर्णदास ने उनको पुराने कपड़ों की तरह उतार दिया। वह सब वाहन छोड़ छाड़कर पैदल चलने लगा। जो कुछ और देते उसी को खाता पीता। उसके साथ कोई न था। वह एकाकी था।

जहाँ कहीं अन्धेरा होता, वह किसी सन्यासी मठ में, या बैरागी मठ में, मैदान में आसन बिछाकर सो जाता।

इस तरह पैदल वह हिमालय की ओर चलता गया। उसका नाम पूर्णदास से पूर्णभक्त हो गया। वह तिब्बत सड़क पर चलता गया। कई घाटियाँ पार करके, एक ऐसे ऊँचे प्रदेश में पहुँचा, जो हिम से ढ़की चोटियों से घिरा हुआ था। उस प्रदेश में देवदारू वृक्षों का वन भी था और भी बड़े बड़े पेड़ थे। उन

पेड़ों के बीच में, एक उजड़ा काली का मन्दिर था।

पूर्णभक्त ने वह मन्दिर साफ किया। देवी की मूर्ति के पीछे उसने एक चुल्हा बनाया। अपना आसन बिछाकर, उसने कुछ आराम किया।

उस मन्दिर के सामने एक बड़ी गहरी घाटी थी। उसमें एक गाँव था।

उजड़े हुए मन्दिर में से धुँआ आता देख, ग्राम का पुरोहित, नये आदमी का स्वागत करने पहाड़ पर आया।

पूर्णभक्त को देखते ही, पुरोहित ने नमस्कार करना चाहा। फिर वह भिक्षापात्र लेकर, बिना कुछ कहे, नमस्कार करके चला गया। उसने गाँववालों से कहा—"कोई महा पुरुष आया है। यहाँ का नहीं है।"

ग्राम की गृहणियों ने अपनी अपनी शक्ति के अनुसार, अच्छे पकवान बनाकर, भिक्षापात्र भर दिया। पुरोहित ने उसे ले जाकर सन्यासी को दिया।

काली मन्दिर के सामने बैठकर वह न जान पाता था कि वह सजीव था, या निर्जीव। वह मन्दिर, पेड़, पहाड़ सब ऐसे लगते थे, जैसे वह स्वयं ही हो। उसे लगा कि जैसे उसकी आत्मा, उसे छोड़, सर्वत्र व्याप्त हो रही हो। उसे विश्व के साथ तादात्म्य होता-सा लगता। इतने में उसे लगता कि उसकी आत्मा उसी के शरीर में है।
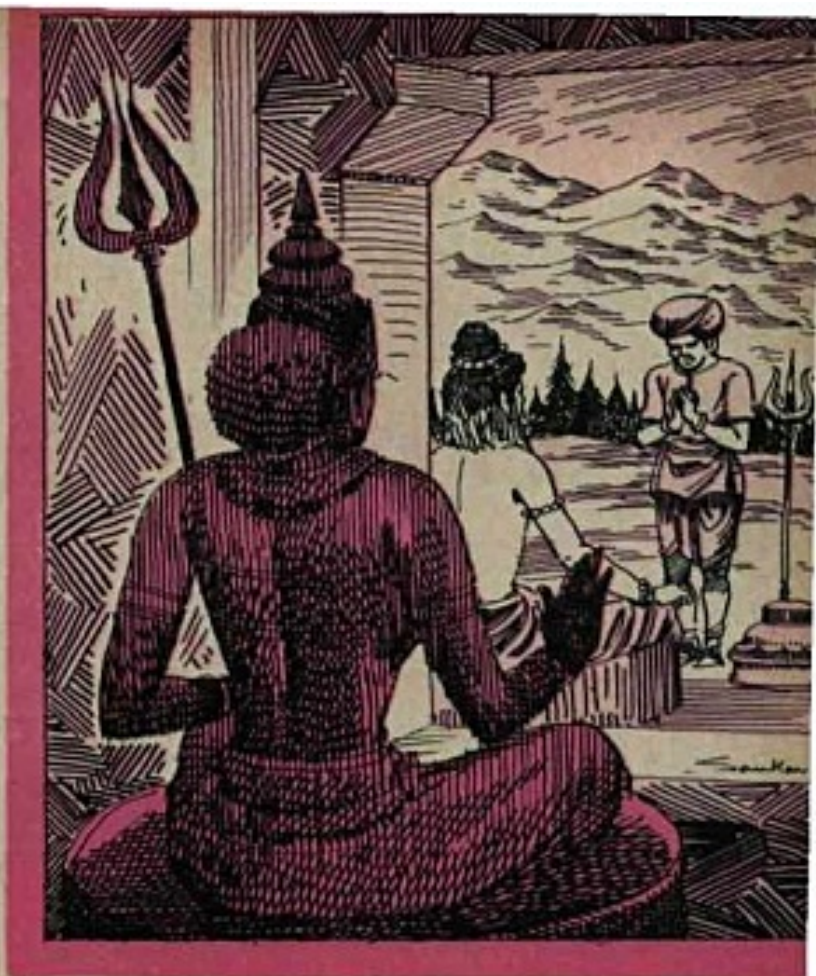
रोज़ गाँव से कोई आता और उसको भोजन दे आता। उसके आने से पहिले बहुत-से जन्तु जानवर उस काली के मन्दिर में आते जाते थे। वे फिर आने लगे। निश्चल पूर्णभक्त, उनको शायद मन्दिर का एक पत्थर-सा लगता था।

पहिले पहल उसके पास लंगूर आये। कोई ऐसी चीज़ नहीं है, जिसे वे न चाहते हों। उन्होंने भिक्षापात्र उंडेल कर देखा। डण्डे को काटकर देखा, आसन देख भौंहें सिमेटीं।

वे जान गये कि सन्यासी उनका कुछ न बिगाड़ेगा। शाम के समय वे देवदारु के पेड़ों से उतर आते। हाथ फैलाकर उससे खाना माँगते। चूल्हे के पास अक्सर बैठ जाते।

एक लंगूर दिन भर उसके पास रहता, दूर दीखनेवाली बर्फ़ीली चोटियों की ओर दीन दृष्टि से देखा करता। कई बार रात में, कोई लंगूर आकर उसके ओढ़े हुए शाल के नीचे सो जाता।

बन्दरों के बाद वहाँ के हरिण उससे हिल गये। वे उससे अपने शरीर खुजलवाते। उसके बाद एक कस्तूरी मृग और एक भालू भी उसके पास आने जाने लगा। वह उनको "भाई....भाई" कहकर पुकारा करता।

इस प्रकार कुछ वर्ष बीत गये। एक वर्ष उस प्रान्त में बड़ी वर्षा हुई। काली मन्दिर की ओर प्रायः वर्षा या बादल नहीं आते थे। वे घाटी में बरस जाते थे। पूरे एक महीने तक पूर्णभक्त को घाटी का गाँव नहीं दिखाई दिया।

एक दिन रात को उसकी नीन्द भंग हुई। कोई उसका शाल खींच रहा था। उसने इधर उधर टटोला तो उसे लंगूर का हाथ लगा। उसने सोचा कि लंगूर उसके शाल के नीचे सोना चाहता था, पर वह उसका हाथ खींच रहा था। यह जान कि उसे भूख लग रही थी, वह चूल्हे के पास गया और आग जलाई। परन्तु लंगूर दरवाजे तक गया, फिर वापिस आकर

घुटने खींचने लगा। वह उसे बाहर बुला रहा था। वह क्या चाहता था, पूर्णभक्त जान नहीं पा रहा था।

इतने में एक हरिण वहाँ आया और उसे पीछे से दरवाजे की ओर धकेलने लगा। फिर उसने मन्दिर के फर्श के पत्थरों को अलग होते देखा। उनके नीचे की सीढ़ियों पर से उसको कोई आवाज़ सुनाई दी। पहाड़ गिर रहा था। वे जन्तु उसको सावधान करने आये थे।

पूर्णभक्त ने झट अपना डंडा लिया। दीया हाथ में लेकर हरिण पर अपना हाथ रख, काली मन्दिर से नीचे उतरने लगा। रास्ता ऊबड़ खाबड़ था। वर्षा जोर से पड़ रही थी। पूर्णभक्त ने किसी बात की परवाह न की। उसके पीछे, उसके मित्र जन्तु भी चले आये।

घाटी में पहुँचते ही, उसने लुहार के घर के किवाड़ खट खटाकर कहा—"उठकर, बाहर आइये।"

अन्दरवाले उसकी आवाज़ न पहिचान सके। उन्होंने पूछा—"कौन है?"

"पहाड़ फिसल रहा है। ढह रहा है। बाहर चले आओ...." उसने कहा।

देखते देखते यह भयंकर समाचार सारे गाँव में फैल गया। गाँव में सब मिलाकर सत्तर आदमी थे।

"घाटी के पार के पहाड़ पर सब चले जाओ। कोई न यहाँ रह जाये।" उसने कहा।

घाटी के पास की नदी पार करके ग्रामवासी बड़ी तेज़ी से पहाड़ पर चढ़ने लगे। उनके पीछे हरिण भी पूर्णभक्त का समान लादकर दूसरे पहाड़ पर चढ़ा। वह दूसरे पर्वत पर, देवदारू वृक्षों के बीच में रुका। जहाँ वह

रुका था, वह घाटी से पाँच सौ फीट ऊँचा था। पूर्णभक्त बेहोश होकर ज़मीन पर गिर गया।

पहिले....कुछ कुछ हल्की हल्की हवा आई। फिर वह बढ़ती गई। होते होते भयंकर प्रलय गर्जन होने लगा। जिस पहाड़ पर ग्रामवासी खड़े थे, उसे मानों किसी चीज़ ने खूब झकझोरा। फिर पाँच मिनट तक गर्जन थमा। वह फिर नहीं आया। अन्धेरे में क्या हो रहा था, किसी को न पता था।

ग्रामवासी पेड़ों के नीचे बैठकर प्रातःकाल की प्रतीक्षा करने लगे। जब सवेरा हुआ, तो उन्होंने देखा कि घाटी भर गई थी। सामने के पहाड़ पर न पेड़ थे, न मन्दिर ही। न मन्दिर का रास्ता ही था। लाल रंग का मिट्टी का मैदान था।

एक मील चौड़ा, दो हज़ार फीट मोटा पर्वत का भाग ढ़हकर घाटी में टूट गया था। घाटी की नदी एक तरफ भर गई थी और दूसरी ओर लाल रंग की एक झील-सी बन रही थी।

ग्रामवासी पेड़ों के नीचे से पूर्णभक्त के पास आये। उसके पास खड़ा हरिण उन्हें देख भाग गया। पूर्णभक्त एक पेड़ के सहारे पद्मासन लगाकर डंडा पकड़े बैठा था। उसमें प्राण न थे।

"उत्तम, सन्यासियों को जिस तरह समाधि में अपने प्राण छोड़ने चाहिए थे, उसी तरह इसने छोड़ दिये।" पुरोहित ने कहा।

एक साल खतम होने से पहिले ही वहाँ पूर्णभक्त के नाम से एक मन्दिर बना और वह पर्वत, भक्त पर्वत कहा जाने लगा।

# फरार कैदी

एक दिन पन्नालाल की पत्नी मीनाक्षी, कुछ और स्त्रियों के साथ, एक और गाँव में हाट देखने गई। जब वे वापिस आ रहे थे, तो उन्होंने एक पेड़ के नीचे एक युवती को प्रसव वेदना में देखा। मीनाक्षी के पूछने पर उस स्त्री ने अपना नाम शारदा बताया। वह भिखारिन थी।

साथ की स्त्रियों की मदद से मीनाक्षी, शारदा को अपने घर ले आयी। घर का एक कमरा खाली किया। शारदा को उसमें लिटाकर, उसने दायी को बुलवाया। जल्दी ही शारदा का प्रसव हो गया।

अन्धेरा होने के बाद पन्नालाल जब घर आया, तो बच्चे का रोना सुनकर उसे आश्चर्य हुआ। मीनाक्षी ने उसके आश्चर्य पर, हँसते हुए जो कुछ गुज़रा था, वह बता दिया। पन्नालाल अपनी पत्नी के किये पर खुश हुआ।

शारदा को देखकर मीनाक्षी को विश्वास न हुआ कि वह भिखारिन थी। उसकी बातचीत से लगता था जैसे वह किसी अच्छे घराने की हो। उसके गले में सोने का हार था। यही नहीं, उसने अपनी कपड़ों की गठरी में से दो सोने की चूड़ियाँ मीनाक्षी को देते हुए कहा—"मेरे पास बस यही है। आपने जो मेरा उपकार किया है, उसके लिए जो भी दूँ, वह कम ही है। आप इन्हें ले लीजिये, मैंने इस तरह के काम के लिए इतने दिनों से इनको बचा रखा था।"

मीनाक्षी ने उनको न लिया—"हमारा ऋण चुकाने की तुम्हें कोई ज़रूरत नहीं है। इन्हें तुम ही रखो। कभी और काम

आयेंगे। तुम्हें देखकर तो ऐसा लगता है कि तुम अच्छे घराने की हो। तुम्हारी यह हालत कैसे हुई ?"

"हाँ, मेरे माँ बाप तो नहीं हैं। पर भाई बन्धु हैं। मैंने एक बहुत गरीब व्यक्ति से, बिना उनको बताये शादी कर ली और मैंने इस तरह उनको नाराज़ कर दिया। जब मैं गर्भवती हुई, तो वे जान गये कि क्या हुआ था और उन्होंने मुझे घर से निकाल दिया और कोई रास्ता न था, मैं और मेरा पति, गाँवों में भीख माँगते माँगते फिरते रहे। अगर हम दोनों मिलकर भीख माँगते तो हम पर कोई नहीं तरस खाता। इसलिए हम अलग अलग घूमते हैं और शाम हम एक जगह इकट्ठे होते हैं। जहाँ मुझे प्रसव वेदना शुरु हुई थी वहाँ ही हम दोनों ने मिलने की सोची थी। पर वैसा हुआ नहीं।" शारदा ने कहा।

यह सुनकर भी मीनाक्षी और पन्नालाल को आश्चर्य हुआ। उनको विश्वास भी न हुआ।

शारदा को दसवें दिन नहलाया गया। उसके लिए उसका पति न आया। शारदा ने उसकी इन्तज़ार भी न की। यह देख भी पन्नालाल को सन्देह हुआ।

दो दिन बाद, पन्नालाल के घर राज सैनिकों ने आकर पूछा—"क्या इस घर में शारदा नाम की स्त्री है ?"

"कौन है वह शारदा ? क्यों आप उसकी खोज कर रहे हैं ?" पन्नालाल ने उन सैनिकों से पूछा।

"उस शारदा का पति परदेश, हत्यारा है। उसने राजकर्मचारी सूबेदार को मार दिया। वह पकड़ा गया। सुनवाई से पहिले ही, वह हवालात से निकलकर भाग आया। हम छः महीने से उसे पकड़ने के लिए हर तरह की कोशिश कर रहे हैं।

अब राजा की आज्ञा हुई है कि अगर परदेश न मिले, तो उसकी पत्नी को ही पकड़ा जाये। उसे अपने पति का पता ठिकाना तो मालूम होगा ही। बहुत पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि शारदा, आपके घर प्रसव के लिए आई हुई है। हम उसे पकड़ने के लिए आये हैं।"

"अरे उस स्त्री को कैसे पकड़ोगे, जिसका अभी प्रसव हुआ है? राजा को अगर मालूम होता कि शारदा गर्भिणी है, तो वे ऐसी आज्ञा कभी न देते।" पन्नालाल ने सरदार की ओर देखते हुए कहा।

राज सैनिकों के सरदार ने खिझकर कहा—"ये सब बातें आप हम से क्यों करते हैं? हम परदेश को पकड़ने के लिए उसकी पत्नी को पकड़कर ले जा रहे हैं। हमें अपना काम करना ही होगा।"

"मैं परदेश हूँ। मुझे पकड़कर ले जाओ।" पन्नालाल ने कहा।

राज सैनिक आपस में एक दूसरे को देखने लगे। उनके सरदार ने हथकड़ियाँ निकालकर पन्नालाल के हाथों में लगा दीं। "चलो" उसने अपने आदमियों से कहा।
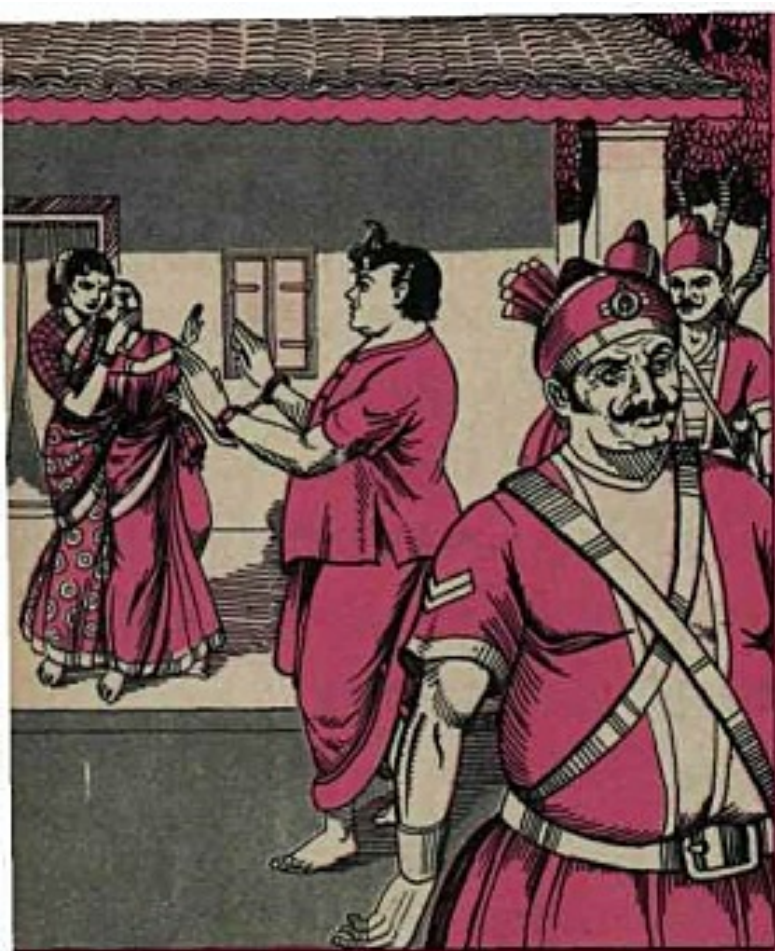
राज सैनिकों को पन्नालाल को हथकड़ियाँ लगाकर ले जाते देख, गाँववालों को अचरज़ हुआ। जिनकी पन्नालाल से नहीं पटती थी उन्होंने कहा—"क्या यह पन्नालाल मामूली आदमी है? छुपे छुपे किसी स्त्री को इसने पटा लिया है। वह गर्भवती हो गई और वह अब उसके घर धरना दिये हुई है। अब पोल खुल गई, सैनिक उसे पकड़कर ले जा रहे हैं।"

यह जब हो रहा था, तो मीनाक्षी वहीं थी। उसने कुछ न कहा। पर जब सैनिक पन्नालाल को ले जाने लगे, तो शारदा जोर से रोती हुई बाहर आयी—"उन्हें न पकड़िये। ये मेरे पति नहीं हैं। मेरे पति हत्यारे नहीं हैं। यह सब बड़ा अजीब-सा लग रहा है।"

"तुम ठहरो। मुझ पर कोई खतरा नहीं आयेगा।" पन्नालाल ने कहा।

मीनाक्षी ने शारदा को समझाया—"तुम ठहरो, कोई अन्याय नहीं होगा। सब गड़बड़ी ठीक हो जायेगी।"

सैनिकों ने पन्नालाल को शहर ले जाकर, कोतवाल के सामने पेश किया।

"जो हत्यारा फरार था, वह परदेश ही मिल गया। उसे हम पकड़कर ले आये हैं।" सरदार ने कहा।

कोतवाल, पन्नालाल और सैनिकों को लेकर सूबेदार की कचहरी में गया। नये सूबेदार ने पन्नालाल को देखकर कहा—"अरे, क्या तुम्हारी अक्ल मारी गई है? यह और हत्यारा? यह और परदेश? पहिले इनकी हथकड़ियाँ खोलो।" इतने में एक और आदमी भागा भागा आया—"उन्हें कैद में न डालिये। वे बड़े धर्मात्मा हैं। मैं हूँ परदेश।"

पन्नालाल ने उस आदमी की ओर आश्चर्य से देखा। उसकी दाढ़ी मूँछे बढ़ी हुई थीं, ऐसा लगता था, जैसे अभी बीमारी से उठा हो। कपड़े चीथड़े हो गये थे। चेहरे पर धूल के जाले से लगे थे।

सूबेदार ने चकित होकर उससे पूछा—"क्या तुम हो परदेश? तुम्हें पकड़ने के लिए क्या क्या नहीं किया गया? वहाँ बैठो, हम बतायेंगे कि हम तुम्हारी खोज क्यों कर रहे हैं?"

फिर सूबेदार ने पन्नालाल को असली घटना सुनाई।

पिछले सूबेदार की हत्या परदेश ने नहीं की थी, पर एक और दुष्ट ने की थी। उसने जिस छुरी से हत्या की थी, उसे परदेश की पुस्तकों में छुपाकर रख दी। परदेश सूबेदार की कचहरी में काम किया करता है। क्योंकि सन्देह जवर्दस्त था, इसलिए परदेश को पकड़ लिया गया। शायद इस डर से कि कहीं उसे फाँसी की सज़ा न हो, वह हवालात से निकलकर भाग गया। तब परदेश को ही फरार हत्यारा समझकर पकड़ने की कोशिश की गई। परन्तु कुछ मास पूर्व, असली हत्यारा

किसी झगड़े में मार दिया गया और मरते मरते वह बयान देता गया कि उसने ही सूबेदार को मारा था। इस तरह परदेश पर जो दोष लगाया गया था वह जाता रहा। राजा की आज्ञा भी आ गई कि परदेश को फिर काम पर रख लिया जाये और व्यर्थ हवालात में रहने के कारण, उसको हरजाना भी दिया जाये। तब से ये सैनिक, परदेश को इसलिए नहीं ढूँढ़ रहे हैं ताकि उसको फाँसी की सज़ा दी जाये। पर यह बात सैनिक नहीं जानते थे। न परदेश ही जानता था। इसलिए वह सैनिकों से, बड़ी होशियारी से बचता फिरता रहा।

जब परदेश बहुत दिन न मिला, तो राजा की आज्ञा हुई कि हरजाने की रकम कम से कम उसकी पत्नी को ही ढूँढ़कर उसे दे दी जाये। कोतवाल और राज सैनिक उस आज्ञा को इस तरह अमल में ला रहे थे।

सूबेदार ने पन्नालाल से माफ़ी माँगी।

"बहुत खुशी है, अगर इस खुश खबरी को सुनने के लिए मुझे अगर चार दिन जेल में भी रहना पड़ा तो कोई बात नहीं है। तो भी इस परदेश को मेरे साथ आने दीजिये ताकि वह अपने लड़के को देख सके, उसका नामकरण आदि हमारे यहाँ कर सके।"

"हाँ, ज़रूर ले जाइये। वह निर्दोष है।" कहकर सूबेदार ने खज़ान्ची को बुलाया। परदेश को हरजाना दिलवाया और पन्नालाल को खर्च के रुपये।

शारदा ने, जो पन्नालाल को सैनिकों द्वारा पकड़े जाने पर रोई थी, उनको अपने पति के साथ आता देख, आनन्दाश्रु बहाये।

# मति भ्रम

काशी का राजकुमार चन्द्रभानु पिता या भाइयों से बिना कहे, देश यात्रा पर निकल पड़ा। वह एक घने जंगल में घुसा। जब उसे उससे बाहर निकलने का मार्ग न मिला तो दिन भर चलकर, अन्धेरा होने पर वह एक घर में पहुँचा, उस घर में एक बुढ़िया और एक जवान लड़की थी। चन्द्रभानु न समझ सका कि बिना आदमी के वे दो औरतें कैसे उस घने जंगल में रह रही थीं।

"सब को देखनेवाला भगवान है। मैं हिल फिर नहीं सकती। मेरी लड़की चन्द्रिका मुझे कोई कमी नहीं होने देती।" बुढ़िया ने कहा।

चन्द्रिका ने उस दिन बढ़िया खाना चन्द्रभानु को खिलाया। वह भोजन देख वह चकित हुआ। चन्द्रिका को देखकर तो उसको और भी आश्चर्य हुआ। वह लड़की उस बुढ़िया की लड़की थी, यह विश्वास भी न किया जा सकता था। दोनों की शक्ल में कोई मेल न था।

वह रात चन्द्रभानु ने बुढ़िया के घर ही बिताई। पर उसे ठीक तरह नीन्द न आई। नीन्द में उसे एक बड़ा खराब सपना आया। उस सपने में वह एक कुत्ता हो गया था। उसे एक जगह बाँध दिया गया था और जब वह बोलने की कोशिश करता, तो वह भौंकता। इतने में उसकी नीन्द टूटी। उसने देखा कि जहाँ वह सोया था, वहाँ न होकर, वह दीवार के सहारे बैठा था और उसके सामने चन्द्रिका खड़ी थी।

"समय नहीं है, पूर्व में सूर्य निकलते ही बुढ़िया फिर वापिस आ जायेगी। इस बीच मैं तुम्हें जंगल पार ले जाऊँगी।" चन्द्रिका ने कहा।

चन्द्रभानु चन्द्रिका के साथ चल दिया। रास्ते में चन्द्रिका ने उस बुढ़िया के बारे में बताया।

वह बुढ़िया एक मन्त्रवेत्ता थी। केशवपुर राजा के महल में वह दायी बनकर गई। राजा की पत्नी ने जब दूसरी बार एक लड़की को जन्म दिया, तो उसने उसके स्थान पर अपनी बेटी रख दी। उस रानी की लड़की ही चन्द्रिका थी।

बुढ़िया रात को कहीं चली जाती। सवेरा होने पर घर पहुँचती। और घर के लिए जरूरी चीज़ें ले आती। घर का काम चन्द्रिका ही किया करती। बुढ़िया ने चन्द्रिका को कुछ मन्त्र तन्त्र भी सिखाये, परन्तु चन्द्रिका ने बिना बुढ़िया के जाने कई और बातें भी सीख ली थीं।

रात जब तुम सो गये थे तो बुढ़िया तुमको कुत्ता बनाकर, बाँधकर चली गई थी। शायद वह तुम्हें कुत्ता बनाकर अपने काम में लाना चाहती थी। मैंने तुम्हें आदमी बना दिया। जब बुढ़िया आकर तुम्हारे बारे में पूछेगी, तो मैं कहूँगा कि मुझे कुछ नहीं मालूम है। वह नहीं जानती कि मैं तुम्हें मनुष्य बना सकती हूँ। सोचेगी कि तुम कुत्ते के रूप में ही चले गये हो, जब तुम इस जंगल से बाहर चले जाओगे तो तुम बुढ़िया के जादू के दायरे से भी बाहर हो जाओगे।" चन्द्रिका ने चन्द्रभानु को बताया। वह जान गया कि जिसे वह सपना समझ रहा था, वह वाक़ई हुआ था।

"मेरे साथ तुम भी क्यों नहीं बुढ़िया के चुंगल से भाग निकलती हो?" उसने चन्द्रिका से पूछा।

"बचकर कहाँ जाऊँ? हमारा दूर देश है। मैं अकेली कहीं जा नहीं सकती। जाऊँगी भी तो मेरे माँ बाप विश्वास नहीं करेंगे कि मैं उनकी असली लड़की हूँ। यह बुढ़िया मुझे माँ की तरह देख रही है। उस हालत में उसको छोड़कर जाने में क्या फायदा है?" चन्द्रिका ने कहा।

"कैसे तुम यहाँ सुखी रह सकोगी? हमारे देश आकर मुझ से विवाह करो, तुम्हारी जिन्दगी आराम से कट जायेगी।" चन्द्रभानु ने कहा।

"इतने साल जंगल में रहकर क्या मैं अन्तःपुर में रह सकूँगी? मुझसे शादी करके शायद तुम सुखी नहीं होगे।" चन्द्रिका ने कहा।

"अगर तुमसे शादी न कर सका, तो मैं शादी ही नहीं करूँगा।" उसने शपथ की।

"अच्छा, तो मैं तुम्हारे साथ आऊँगी, पर मेरी सारी जिम्मेवारी तुम पर ही होगी।" चन्द्रिका ने कहा।

चन्द्रभानु इसके लिए मान गया। अभी रात कुछ बाकी थी कि दोनों जंगल से बाहर निकल गये। वे बहुत से देशों में घूमने के बाद, बहुत दिन यात्रा करने के बाद काशी के पास गये। चन्द्रभानु ने चन्द्रिका को एक पेड़ के नीचे रहने के लिए कहकर बताया—"मैं नहीं चाहता कि मेरी होनेवाली पत्नी नगर में चलकर जाये। मैं राजमहल जाकर, पालकी मंगलवाद्य, दास, दासी, उपहार आदि लेकर, तुम्हें जलूस में घर ले जाऊँगा।"

सौभाग्यवश उसी दिन चन्द्रभानु के बड़े भाई का विवाह हो रहा था। इसलिए राजमहल में बड़ी रौनक थी। अन्त:पुर में उसको दुल्हिन और उसकी छोटी बहिन दिखाई गईं। पर उसका मन पेड़ के नीचे बैठी चन्द्रिका पर ही था।

"अरे अभी ही तो आये हो और इतने में फिर जाने के लिए तैयार हो गये। भोजन तैयार है। खाना खालो पहिले।" उसकी माँ ने कहा।

"अभी समय नहीं है, फिर आकर खा लूँगा।" चन्द्रभानु ने कहा।

"भोजन करने के लिए अगर समय न हो, तो यह फल ही लीजिये।" कहते हुए दुल्हिन की छोटी बहिन ने उसके हाथ एक फल दिया। उसे लेते ही चन्द्रभानु चन्द्रिका को भूल गया और जिस लड़की ने फल दिया था उसकी ओर देखने लगा। उसका नाम चन्द्रकला था। वे केशवपुर के राजा की लड़कियाँ थीं।

चन्द्रभानु को चन्द्रकला बड़ी खूबसूरत लगी। उसे लगा कि यदि उसने भी अपने भाई के साथ, चन्द्रकला के साथ शादी कर ली, तो बड़ा अच्छा होगा।

"अगर तुम अकेले ही घर गये, तो मुझे शायद भूल जाओगे। मुझे पैदल जाने में कोई आपत्ति नहीं है, जलूस की भी क्या ज़रूरत है?" चन्द्रिका ने कहा।

"सारी जिम्मेवारी तुमने मुझ पर ही रखी है। इसलिए मुझे अपनी मर्ज़ी के मुताबिक करने दो।" कहता चन्द्रभानु बड़ी तेज़ी से राजमहल गया। सब उसे देख बड़े चकित हुए। उसने उनके प्रश्न भी न सुने "सब बातें फ़ुरसत से बाद में बताऊँगा। पहिले एक पालकी, मंगलवाद्य, उपहार तैय्यार करो।" चन्द्रभानु ने आज्ञा दी।

उसे चन्द्रकला की ओर टकटकी बाँधे देखता देख, उसकी माँ ने कहा—"यदि तुम दोनों की शादी हो गई, तो बड़ा अच्छा होगा। इसलिए ही तुम्हें भगवान ने ठीक समय पर भेजा है।"

चन्द्रभानु यह सुनकर मुस्कराया। चन्द्रकला लजा गई।

इतने में वहाँ कोई आया—"महाराज, आपके कहे अनुसार हमने पालकी, बाजे गाजे, नौकर आदि सब तैयार कर दिये हैं। अब क्या हुआ है?"

"मैंने कहा था? मुझे पालकी और बाजे गाजों की क्या ज़रूरत है? कहीं किसी ने कोई गलती की है।" चन्द्रभानु ने कहा।

उधर चन्द्रिका, चन्द्रभानु के लिए घंटो इन्तज़ार करती रही। उसने सोचा कि वह उसे भूल गया था। वह वहाँ से पैदल राजमहल की ओर गई। राजमहल के पास एक विशाल मैदान था और उसके किनारे एक ही एक झोंपड़ी थी। चन्द्रिका उस झोंपड़ी में गई। वहाँ एक बुढ़िया थी। चन्द्रिका ने बुढ़िया से पूछा—"नानी, क्या मुझे यहाँ थोड़ी देर रहने दोगी?"

"बुढ़िया मान गई।"

"नानी, क्या मैं इस घर को थोड़ा सुन्दर बना दूँ?" चन्द्रिका ने पूछा।

"मेरे पास कानी कौड़ी नहीं है। अगर तुम कर सको, तो कर लो।" बुढ़िया ने कहा। चन्द्रिका बाहर गई और एक टोकरे में रेत भरकर लाई और उसे घर की बाहर और अन्दर की दीवारों पर छिड़का। तुरत वे मिट्टी की दीवारें सोने की दीवारें सी हो गईं। इसी तरह चन्द्रिका ने फर्श भी संगमरमर का-सा कर दिया। छत पर एक सोने का बुर्ज़-सा बना दिया।

रथ जब चन्द्रिका के घर के सामने से गया, तो उसकी धुरी टूट गई। कुछ राजमहल भागे भागे गये और दूसरी धुरी लाये, पर उसे लगाते ही, वह भी टूट गई।

इस बीच में, बगल में ही एक सोने के घर को, जो पहिले वहाँ न था, देखकर, एक आदमी अन्दर यह देखने गया कि उसमें कौन रह रहा था।

चन्द्रिका ने उससे पूछा—"आप कौन हैं? क्या है यह गड़बड़ी गली में?"

राजकुमार अपनी वधुओं के साथ देवी के मन्दिर की ओर जा रहे थे कि रथ की धुरी टूट गई। जब नई धुरी लगाई गई, तो वह भी टूट गई। कुछ समझ में नहीं आ रहा है।" उस दरबारी ने कहा।

"यही न! लोहे के सुये को धुरी की जगह रखने के लिए कहो।" कहकर चन्द्रिका ने उसे एक लोहे का सुआ दिया।

वह एक क्षण तो चकित रहा। उस सुये को ले जाकर, उसने रथ के मरम्मत करनेवाले को दिया। उसने उसे धुरी की जगह लगा दिया और वह टूटा नहीं।

"अब चलो चलें...." पुरोहित ने कहा।

अपने घर को इस तरह बदला देखकर, बुढ़िया घँबरा गई। उसे सन्देह भी हुआ कि कहीं यह चन्द्रिका कोई भूत या पिशाचिनी तो नहीं थी। वह घर छोड़कर कहीं चली गई।

अगले दिन ही दोनों राजकुमारों का विवाह था। वधु वर को क्योंकि विवाह से पहिले देवी की पूजा करनी होती है, दोनों वर, दोनों वधुओं के साथ रथ में बैठकर, पुरोहितों को लेकर, नगर के बाहर के मन्दिर की ओर निकले।

अभी उसकी बात पूरी भी न हुई थी कि रथ की छत टूट गई। सब घबराये। एक और छत लाकर लगाई गई, परन्तु वह भी टूट गई।

वही आदमी, जो पहिले लोहे का सुआ लाया था फिर चन्द्रिका के पास गया—"हम फिर अटक गये हैं। छत टूट गई है। नई जो लगाई गई थी, वह भी टूट गई है। अब क्या किया जाये?"

"इसमें क्या रखा है? घर का एक दरवाजा देती हूँ, उसे लगाओगे तो नहीं टूटेगी।" चन्द्रिका ने कहा।

दरबारी ने सोने के किवाड़ को लेकर छत की जगह रखने के लिए कहा। वह न टूटा। सब ठीक जानकर रथ के हाँकनेवाले ने रथ पर सवार होकर घोड़ों को चलाया। परन्तु वे हिले नहीं। तब रथ में चार घोड़े जुते हुए थे। चार घोड़े और जोते गये। परन्तु आठ घोड़ों के खींचने पर भी रथ न हिला। उस दरबारी ने जाकर फिर चन्द्रिका से कहा।

"उन घोड़ों को छोड़ दो। रथ में हमारे घर का एक बछड़ा जोतो। रथ चलने लगेगा।" चन्द्रिका ने कहा।

सारी बात हास्यास्पद-सी लग रही थी। रथ, रथ नहीं लग रहा था और अगर उसमें बछड़ा जोत दिया गया तो हद हो जाती। पर काम निकालना था। इसलिए घोड़ों को हटाकर बछड़ा जोत दिया गया। तुरत रथ तेज़ी से चलने लगा। वह बछड़ा जैसा कि हाँकनेवाला चाहता वैसे न चलकर शहर भर में अपनी इच्छानुसार घूमता रहा। आखिर वह बछड़ा सोने के घर के सामने ही रुका।

चन्द्रभानु को बड़ा गुस्सा आया। वह उस घर में रहनेवाली को सज़ा देने के

लिए जल्दी जल्दी उस घर में आया। परन्तु चन्द्रिका को देखते ही उसे अतीत याद हो आया।

"तुम्हारे लिए मैंने पेड़ के नीचे बहुत देर इन्तज़ार की। यह सोच कि तुम नहीं आओगे इस घर में आकर रहने लगी। सुना कि तुम्हारा विवाह हो रहा है। जब उसमें बाधायें आने लगीं, तो मैंने यथाशक्ति तुम्हारी सहायता की।" चन्द्रिका ने कहा।

चन्द्रभानु ने उससे माफ़ी माँगी। "मैं तुम्हें कैसे भूल गया? क्या हुआ होगा?"

"कुछ और नहीं हुआ। तुम जिस लड़की से शादी करने जा रहे हो....वह उस मन्त्रवेत्ता बुढ़िया की लड़की ही है। उसमें भी अपनी माता की कुछ शक्तियाँ हैं। उसके कारण तुम्हारी स्मरणशक्ति चली गई होगी।" चद्रिका ने कहा।

"मैं तुमसे ही विवाह करूँगा। हमारे साथ आओ।" कहता चन्द्रभानु उसका हाथ पकड़कर, उसको बाहर ले आया। उसने चन्द्रकला से कहा—"तुम बड़ी दुष्ट हो, तुम्हारे कारण ही हमारा रथ इतनी बार बिगड़ा है। इस अपशकुन के बाद मैं तुम से विवाह नहीं करूँगा।"

उसने एक और रथ बुल्वाया। उसपर वह चन्द्रिका के साथ सवार हुआ। अपने भाई और वधु को भी उसी रथ में सवार करवाया। वे सीधे देवी के मन्दिर में गये। रास्ते में कोई विघ्न न हुआ। सब सुनने के बाद, चन्द्रभानु के पिता ने चन्द्रिका को अपनी वधू के रूप में स्वीकार किया। उन दोनों का बड़े वैभव के साथ विवाह हुआ।

# कथा न जाननेवाला

एक गाँव में एक खिलौने बनानेवाला था। उसका नाम शिवराम था। अभी दसहरा दो महीने बाद था कि उसने खिलौने तैयार किये....उन पर अच्छे रंग लगाये। एक टोकरे में रखकर रास्ते के गाँवों में उनको बेचता।

एक बार शिवराम गाँवों में से कस्बा जा रहा था कि ऐसी जगह अन्धेरा हो गया, जहाँ न कोई बस्ती थी, न कोई गाँव ही। वह उस अन्धेरे में ही चलता गया। दूर उसने दीये की रोशनी देखी। उसकी जान में जान आई।

यह दीया एक घर में जल रहा था। शिवराम भी घर के पास गया तो उसमें एक ही एक बूढ़ा था। शिवराम ने उस बूढ़े से कहा—"बाबा, हम बहुत दूर से आ रहे हैं। रास्ते में अन्धेरा हो गया। क्या सवेरे तक आप हमें टिका लेंगे?"

"इसमें कौन-सी बड़ी बात है? उस टोकरे को उस तरफ़ रख दो और यहाँ आकर बैठो। बातों बातों में मेरा समय भी कट जायेगा। मैं रसोई शुरु करने जा रहा हूँ। दोनों मिलकर खाना खायेंगे।"

शिवराम बड़ा खुश हुआ। बाबा अच्छा आदमी दिखाई दिया। वह किसी पेड़ के नीचे कीचड़ में सोने की बला से बच गया। यही नहीं, बाबा की मेहरबानी से उसे खाने को भी मिल गया।

बाबा रसोई घर में गया और जल्दी ही वापिस चला आया। "मैंने रसोई करनी शुरु कर दी है, जल्दी ही हो

जायेगी। कुछ गावो तो सुनें।" शिवराम के सामने बैठते हुए उसने कहा।

"मैं गाने वाने नहीं जानता।" शिवराम ने कहा।

"अरे....गाना भी नहीं जानते? तो कोई कहानी सुनाओ।" बूढ़े ने कहा।

"मैं कहानी भी नहीं जानता।" शिवराम ने कहा।

बाबा इतने में क्रुद्ध हो उठा। "गाना नहीं आता, कहानी नहीं आती....मैं तुम्हें एक क्षण यहाँ नहीं रहने दूँगा। जाओ बाहर।"

शिवराम चकरा-सा गया। बूढ़े का व्यवहार उसे बड़ा विचित्र-सा लगा। पर क्या करता? वह अपना टोकरा लेकर, बाहर निकला। उसने सोचा कि बाबा उसे फिर बुलायेगा, परन्तु उसने वैसा नहीं किया।

शिवराम ने आगे न जाना चाहा। चाहे आधी रात ही हो जाये, उसने, जिस गाँव से वह आया था, वहाँ जाने की ठानी। कहीं किसी के यहाँ रात काटने का निश्चय किया।

इसलिए वह टोकरा सिर पर रखकर पीछे चल पड़ा। जब वह थोड़ी दूर गया तो रास्ते के बगल में उसने किसी को चूल्हे पर कुछ पकाते देखा। अन्धेरे में उस व्यक्ति की शक्ल ठीक तरह नहीं दिखाई देती थी।

"क्या तुम ही हो शिवराम? ज़रा इस हंडे को इस करछी से घुमाते रहो, अभी आता हूँ।" उस व्यक्ति ने कहा।

न मालूम वह कौन है? उसने उसको कैसे पहिचाना, यह शिवराम न जानता था। उसकी दी हुई करछी से वह हंडा हिलाने लगा। न मालूम वह क्या चीज़

थी, सारा हंड़ा उससे भरा था और खाने के लिए सिवाय उस व्यक्ति के कोई और न था। शिवराम ने सोचा कि शायद उसे भी कुछ खाने को मिल जायेगा।

करछी देकर जो व्यक्ति चला गया था, वह बहुत देर बाद भी वापिस न आया। "अरे....भाई...." शिवराम ने आवाज़ दी पर कोई जवाब न आया।

"क्यों? क्या इधर उधर देख रहे हो? घुमाते क्यों नहीं हो?" चूल्हे के हंड़े ने कहा।

शिवराम डर गया। करछी नीचे फेंककर खड़ा हो गया। उसे लगा, जैसे वह भूतों के हाथ आ गया हो।

"इतना घमंड?" कहती करछी ज़मीन पर से उठी और उसके सिर पर जोर से लगने लगी।

शिवराम और भी डर गया। वह इतना डरा कि उसे अपने टोकरे का भी ख्याल न रहा और वह सिर पर पैर रखकर भागने लगा। करछी उसका पीछा करती, उसकी पीठ पर मार रही थी।

सौभाग्यवश, शिवराम ने रास्ते में एक घर देखा, जिसके किवाड़ खुले हुए थे। अन्दर घुसकर उसने किवाड़ बन्द किये और पीछे की ओर देखा। वह उसी बूढ़े का घर था।

"क्या हुआ? क्यों यूँ घबराये हुए आये हो?" बूढ़े ने पूछा।

शिवराम ने जो कुछ हुआ था, बूढ़े को बताया। बाबा सुनकर बड़ा खुश दिखाई दिया। "अगर यह कथा पहिले सुनाते तो मैं तुम्हें बाहर ही न भेजता। रसोई हो गई है....आओ खाना खायें।" उसने कहा।

# अशिक्षित सामन्त

स्पेन देश में एक ज़मीन्दार रहा करता था। उसके पास बहुत-से गाँव थे। वह बड़ा धनवान था। घमंड़ी भी। इसलिए उसने पढ़ा लिखा न था। वह सोचता कि वह सर्वज्ञ था। अगर लिखना पढ़ना न आया, तो क्या हुआ....रुपया दिया, तो पढ़े लिखे बहुत-से मिल सकते हैं।

इसलिए एक पढ़े लिखे गरीब को वह हमेशा, पढ़ने लिखने के लिए रखा करता। उस आदमी का काम, सामन्त की कच्ची भाषा को, परिमार्जित करके पत्र लिखना था।

एक बार राजा के यहाँ से सामन्त को एक हुक्म आया। कहीं युद्ध हो रहा था। "तुम अपने सैनिकों को साथ लेकर मैदान में जाओ और युद्ध करो।" राजा ने सामन्त को लिखा था। ज़मीन्दार ने तुरत अपने सैनिकों को सन्नद्ध किया और अपने "लेखक" को भी साथ लेकर निकल पड़ा।

कुछ दिन तो सब कुछ ठीक चलता रहा। हर रोज की युद्ध वार्तायें लेखक लिख देता और ज़मीन्दार से मुद्रा लगवा लेता और राजा को भेज देता। पर एक बार बाण भटककर, लेखक को लगा और वह मर गया।

ज़मीन्दार को नये आदमी को रखने की नौबत आयी। पर वहाँ, वह ऐसा व्यक्ति मिलना आसान न था। तब भी राजा का घमंड़ कम न हुआ। उसने मन में भी न सोचा—"क्या अच्छा होता यदि मैं पढ़ना लिखना जानता।"

स्पेन की लोक कथा

इस बीच एक और बात हुई। एक दिन राजा के यहाँ से कोई दूत एक पत्र लेकर आया और राजा के हाथ में वह रखकर, अपने घोड़े पर सवार होकर चला गया। ज़मीन्दार न जान सका कि राजा ने क्या सन्देश भेजा था। राजा क्या यह चाहते हैं कि हम मैदान में आगे बढ़ें? या हमें पीछे हटने के लिए कहते हैं? ज़मीन्दार अन्धेरे में, इसी उधेड़बुन में था कि एक सैनिक उसे दिखाई दिया। वह ज़मीन्दार के गाँव के पास के गाँव का रहनेवाला था। वह लिखना पढ़ना जानता था। इसलिए उसने उस आदमी को बुलाकर कहा—"अरे, इसे पढ़कर तो बताओ, गलत पढ़ा तो पेट फड़वा दूँगा। यही नहीं, इसमें लिखी बात सिवाय मेरे और तेरे किसी को न मालूम हो।"

यह आदमी वैसे भी ज़मीन्दार से खिझा हुआ था चूँकि कुछ दिन पहिले ज़मीन्दार ने, किसी गल्ती पर उसे कोड़े लगवाये थे। उस आदमी को बदला लेने का अब अच्छा मौका मिल गया था। उसने राजा का पत्र खोलकर कहा और यूँ दिखाया जैसे कोई आफ़त आ पड़ी हो।

“राजा की आज्ञा है कि आप युद्ध भूमि छोड़कर तुरत दरबार में हाजिर हों। किसी ने दोष लगाया है कि आप राजद्रोही हैं।”

“मैं राजद्रोही हूँ। जिसने यह अफवाह उड़ाई है, वे कितने दुष्ट होंगे। मैं खुद जाकर, उनके सिर काट दूँगा।” ज़मीन्दार ने कहा।

वह तुरत राजधानी की ओर निकल पड़ा। दूर जाना था और यात्रा भी आसान न थी और अन्धेरा हो चुका था। आस पास कोई गाँव बस्ती भी न थी। ज़मीन्दार ने रात भर के लिए, घोड़ा एक पेड़ से बाँध दिया और कड़ी ज़मीन पर लेटकर उसने रात काट दी। जब वह सवेरा उठा, तो उसने देखा कि रास्ते के एक पत्थर पर कुछ लिखा हुआ था। वह तो बेपढ़ था, इसलिए वह न जान सका, उस पर क्या लिखा था। यह सोच कि हो सकता है कि उसमें कुछ संकेत हो। वह पत्थर के पास गया और पैर फिसलकर खन्दक में गिर गया।

“पास मत आओ....” यह उस पत्थर पर लिखा था।

खन्दक से निकलना उसके लिए बहुत मुश्किल हो गया? उसकी कमर में मोच-सी आ गई। वह हिल डुल भी न सका। कराहता कराहता, वह एक गाँव में पहुँचा और एक सराय-सी जगह में, सोने के लिए थोड़ी-सी जगह ले ली।

उस सराय में, पास के गाँववाला एक आदमी मिला। वह ज़मीन्दार से बचकर कहीं भागा जा रहा था। इसलिए जब उसको ज़मीन्दार फिर दिखाई दिया, तो उसके प्राण पखेरु उड़ से गये। पर ज़मीन्दार को उसे देख, प्राण आ-से गये। वह बड़ा खुश हुआ।

"अरे वाह, तुम भी खूब दिखाई दिये। मैं राजधानी नहीं पहुँच सकता। राजा को मेरे बारे में कहो, लिखो कि जब थोड़ा ठीक हो जाऊँगा, तो मैं उनकी खबर लूँगा, जिन्होंने उनके कान भरे हैं।" ज़मीन्दार ने उस आदमी से कहा। उस आदमी ने, जैसा कि ज़मीन्दार ने कहा था, वैसा न लिखकर, तरह तरह के अपशब्द राजा को लिखे और उस पर ज़मीन्दार की मुद्रा डालकर उसे भेज दिया।

राजा ने वह पत्र देखा। उसे बड़ा गुस्सा आया। "इस आदमी को जीवित या मृत, तुरत पकड़कर लाओ।" उसने अपने सैनिकों को आज्ञा दी।

ज़मीन्दार को पकड़कर, कैद में रखा गया। चूँकि वह बड़ा घमंडी था, इसलिए उसने न राजा से कोई माफ़ी माँगी, न कोई कैफ़ियत ही देने की कोशिश की। जो होता है, सो हो, यह सोच वह चुप बैठा रहा।

ज़मीन्दार से सच बुलवाने के लिए राजा ने उसे बहुत सताया। पर ज़मीन्दार ने अपने मुँह अपने को "निर्दोष" बताना भी अपमानजनक समझा।

राजा ने तंग आकर कहा—"मैं इस द्रोही को शिरच्छेद का दण्ड देता हूँ।"

न्यायाधिपति ने कहा—"महाराज, जल्दबाजी न कीजिये। मुझे भय है कि इस आदमी ने जिन पत्रों पर अपनी मुद्रा लगाई है। उनको उसने नहीं पढ़ा है।"

"कहते हैं, वह पढ़ना लिखना नहीं जानता है।" एक और कर्मचारी ने कहा।

"क्या? यह मेरे जितना है....चार पाँच बरस लगाकर इसने पढ़ना लिखना भी न सीखा? उसे पढ़ना नहीं आता है, यह कैसे साबित करोगे?" राजा ने उनसे पूछा।

न्यायाधिपति ने राजा के दण्ड को एक कागज़ पर लिखा और उसे कैद में ज़मीन्दार के पास ले गया। और उससे कहा—"यदि तुमने इस पर हस्ताक्षर किये, तो हम तुम्हें छोड़ देंगे।"

"इसमें क्या लिखा है?" ज़मीन्दार ने पूछा।

-"तुम निर्दोष हो और जो तुम पर अभियोग लगाया गया है....वह सच नहीं है।" न्यायाधिपति ने कहा।

"अच्छा, यदि यही बात है, तो मैं हस्ताक्षर किये देता हूँ।" ज़मीन्दार ने अपनी मुद्रा लेकर उस पर लगा दी। वह मुद्रा ही ज़मीन्दार की निशानी थी।

राजा जान गया कि ज़मीन्दार बेपढ़ था। उसे रिहा करके भेज दिया गया। ज़मीन्दार के बारे में जिसने वह अफवाह उड़ाई थी, वह मिल गया। उसे आजीवन कैद की सज़ा मिली। शिक्षा का न आना एक गलती है, पर विश्वासघात घोर अपराध है।

# कृष्णावतार

कृष्ण के तालाब में कूदते ही, ऐसी उथल पुथल हुई मानों क्षीर सागर में मन्दर पर्वत गिर पड़ा हो। वह उथल पुथल पाताल तक पहुँची।

काली को बड़ा गुस्सा आया। उसने अपने पाँच फण खोले। मुख इस तरह खोला ताकि उसके बड़े बड़े दान्त दीखें। वह विष ज्वालायें उगल रहा था। मुड़नेवाले अपने शरीर को उसने फैला दिया। कृष्ण को उसने जगह जगह काटा। उसके शरीर को लपेटकर वह दबाने लगा। कृष्ण मूर्छित हो गया। यह देख काली के बन्धु, स्त्री, बच्चे, आदि महासर्पों ने कृष्ण को घेर लिया और लपटें उगलते उसे काटा।

गोप कुमार, जो यह सब देख रहे थे डर गये। वे दक्षिण में, पास के गाँव में भागे भागे गये। "नन्द गोप का लड़का कृष्ण, हमारे साथ खेल रहा था। फिर वह यकायक बिना किसी से कहे, नदी के पोखर में, जिस में बड़े बड़े साँप रहते हैं, कूद पड़ा। सबसे बड़े साँप ने उसे धर दबोचा। हिलने तक नहीं दे रहा है। सब साँप उसे काट रहे हैं। नहीं मालूम उसका पिता कहाँ है। आओ, सब मिलकर कृष्ण को छुड़ाने की कोशिश करें।

७. काली मर्दन

यह खबर सुनते ही, मानों लोगों पर बिजली गिर पड़ी। नन्द को दुःख हुआ और साथ आश्चर्य भी। "कहाँ? कहाँ?" कहकर वह जिन्होंने खबर दी थी, उनके साथ चल पड़ा। बलवान गोप, हाथों में हथियार लिए उसके आगे आगे भागे। यशोदा मूर्छित होते होते बची। वह जोर से रोने लगी। उसकी वेणी खुल गई थी और गोप स्त्रियों का हाथ पकड़कर, वह पोखर की ओर चलने लगी।

आखिर सारा का सारा गाँव उस ओर चल पड़ा। "जाने क्या आफ़त आ पड़ी है।" कई ने कहा। "कृष्ण हमेशा कुछ न कुछ शरारत करता रहता है। छोटा है, पर छोटों के काम नहीं करता।" कई और ने कहा—"इससे बड़ी बड़ी आफ़तों का वह सामना कर चुका है। काली को वह कुचल देगा। कृष्ण का बाल बाँका नहीं होगा। देखते रहना।"

सब यमुना के किनारे, कृष्ण को देखकर, पसीना पसीना हो गये। वह साँप के चुँगल में फँसकर बड़ी दयनीय स्थिति में था। ऐसा लगता था, जैसे कोई भी कुछ न कर सकता हो। नन्द और यशोदा मूर्छित हो गये। बाकी उन पर पानी छिड़क कर उनको होश में लाये।

नन्द ने बाकी लोगों से कहा—"न मालूम मैंने क्या पाप किया है कि मेरा लड़का यूँ साँप का शिकार हो रहा है। मेरा भाग्य भी क्या है? सब मेरी प्रशंसा करते थे कि मेरा इतना बड़ा पराक्रमी लड़का है, तो भगवान की ही उस पर नज़र पड़ गई। पूतना आदि को इसने मारा है, क्या इस साँप को नहीं मार सकेगा, एक तरफ़ यह आशा भी है। हम जैसे तैसे ढ़ाढ़स कर लेंगे। पर अपने

लड़के की दुस्थिति देखकर माँ कैसे अपना दुःख रोक सकेगी।"

तब यशोदा ने कृष्ण से कहा—"बेटा, मक्खन खाने पर, जब गोपियों ने तुम्हारी शिकायत की थी, तब मैंने तुम्हें ओखल से बाँध दिया था। क्या इसीलिए आज तुम मुझे यूँ तंग कर रहे हो? तुम इतने बलवान हो। यह साँप तुम्हारा क्या बिगाड़ सकेगा? क्या तुम्हें मुझ से प्यार नहीं है? एक बार ज़रा मुझे देखकर हँसो तो? देखो, जंगल में गौव्वें तितर बितर होकर भाग रही हैं। तुरत आ जाओ। जिसने विष वृक्षों का जंगल ही खतम कर दिया, क्या उसके लिए साँप कोई बड़ी बात है?"

सब दुःखी हो उठे। यह सोच कि यशोदा का पुत्र मर गया था, हर किसी ने तरह तरह की बातें कीं। "चलो हम सब पोखर में कूदकर उस साँप से युद्ध करें। आओ, कृष्ण को छुड़ायें। नहीं तो इस काली की विषाग्नि में हम भी मर जायेंगे। बिना कृष्ण के हम कैसे अपने गाँव जायें?"

बलराम सब देख रहा था और सब की बातें सुन रहा था। आखिर उसने कृष्ण से यूँ कहा—"अरे....कृष्ण, लोक हित की भावना भूलकर, इस कम्बख्त साँप के चुँगल में आ फँसे। देखा, हमारे सब लोग किस दयनीय स्थिति में हैं। इस जहरीले कीड़े को मारकर हम सबको सन्तुष्ट करो।"
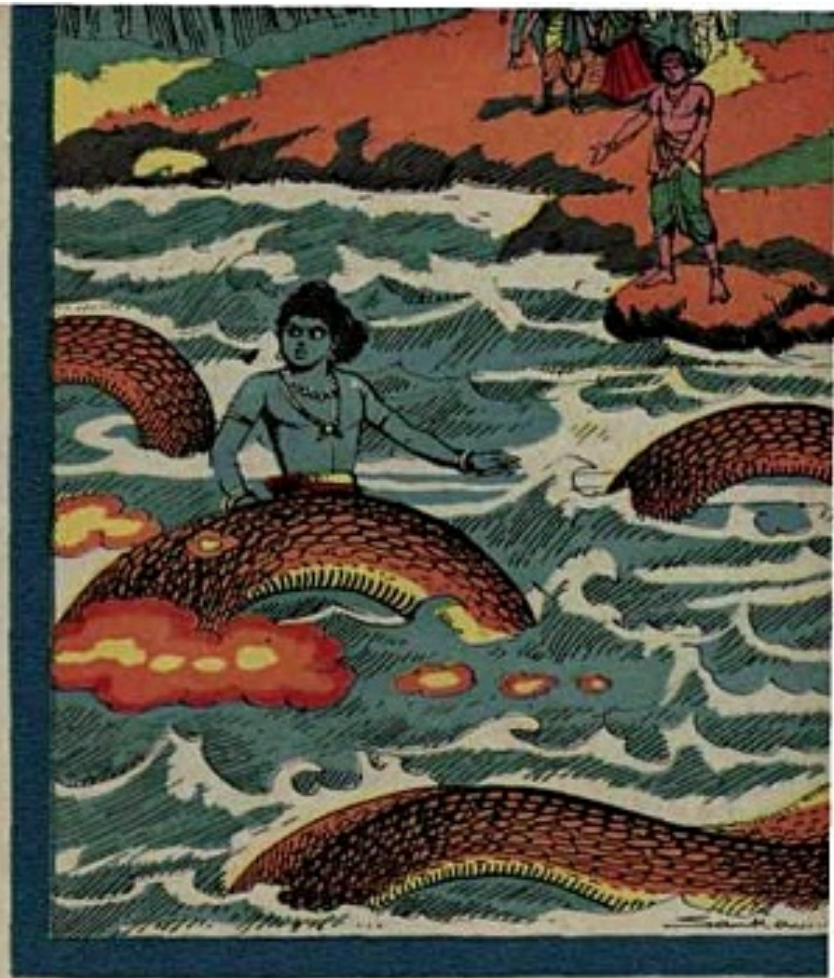
यह सुनते ही कृष्ण होश में आ गया। कृष्ण साँप के चुँगल से निकल आया। उछलकर साँप के फन पर जा बैठा।

वह काली की पूँछ हाथ में लेकर उसके सिर पर उछल कूद करने लगा। यमुना

की लहरें मानों ताल दे रही हों, गोपालक खुशी से गाने लगे। कृष्ण को काली के फणों पर नृत्य करता, आकाश में से देवताओं ने देखा।

काली के सिर चूर हो गये। उसकी नाकों से खून की धारा बहने लगी। उसके दान्त टूट गये। लपटों के साथ उसके मुख से विष निकला। वह कुचल दिये जाने पर कमल डँड़ी-सा हो गया। मरने को ही था। तब उसने हीन स्वर में कहा—"देव! यह बिना जाने कि तुम सर्वेश्वर हो मैंने अपने तुच्छ कोप में तुम्हारे पवित्र शरीर पर प्रहार किया। तुमने मुझे उचित दण्ड दिया। मुझ पर दया करो। माफ़ करो। मेरा विष चला गया है। अक्ल आ गई है। मैं तुम्हारा दास बनकर रहूँगा। जो तुम कहोगे वह करूँगा। तुम्हारे चरण छूकर मैं पवित्र हो गया हूँ। तुम्हारा कोप मेरे लिए तुम्हारा अनुग्रह है।

कृष्ण को काली पर दया आ गई। "तुम....अब से यमुना नदी में नहीं रह सकते। तुम अपने लोगों को इकट्ठा करके समद्र में चले जाओ। जब तुम्हारा विष चला जायेगा, तो नदी का पानी साफ़ हो-जायेगा और लोगों के काम आयेगा। तुम्हारे सिर पर मेरे पैरों के चिन्ह देखकर गरुत्मन्त तुम्हारा कुछ न बिगाड़ेगा। यही तुम्हें मेरा वर है।"

काली, अपने परिवार को लेकर समुद्र की ओर निकल पड़ा। कृष्ण नदी में से किनारे आया। माँ बाप ने उसे गले लगाकर आशीर्वाद दिया। कृष्ण ने उनको नमस्कार किया। गोप कुमारों ने उसको घेर लिया। उसकी प्रशंसा करने लगे। उस पर आश्चर्य करने लगे।

गोपालकों में से मुख्य लोगों को कृष्ण भगवान-सा लगने लगा। "इतना बल और साहस कहीं किसी के पास न होगा। तुम्हारी महिमा सारे संसार में फैलनी चाहिये। तुम हमारे रक्षक हो, हमारे पशुओं के रक्षक हो। तुम्हारी दया से हमारी गौव्वें जहाँ चाहेंगी, वहाँ घूम सकेंगी। अब हमारे लिए इस नदी में उतरने में कोई खतरा नहीं है। हम अब तक यह समझ नहीं पाये थे।" यह कहकर, उन्होंने उसकी प्रदक्षिणा की।

उसने यथोचित बातें कीं। उन सब के साथ गाँव वापिस चला आया और हमेशा की तरह सुखपूर्वक रहने लगा।

कुछ समय बीता। पशुओं के लिए घास न रहा। कृष्ण ने और गोपालकों से परामर्श किया कि क्या किया जाये। तब उनमें से प्रमुखों ने एक बात कही।

"गोवर्धन के उत्तर में कालिन्दी नदी के पास ही, एक विशाल ताड़ का बाग है। उसमें खूब हरी घास है। परन्तु उसमें धेनुक नाम का राक्षस गधे के रूप में होने के कारण वहाँ कोई प्राणी न घुसता था।"

यह बात सुनते ही, बलराम और कृष्ण में जोश आ गया। उन्होंने साहसी गोपालकों से कहा—"पशुओं को घास चाहिये। हम क्या राक्षसों से डरेंगे? चलो।" वे सब गोपालकों को लेकर, उस बाग की ओर गये। उसमें जिस तरफ देखो, उस तरफ हरी घास चमचमा रही थी। पशु उसे बड़े लालच से खाने लगे। कृष्ण आदि गोपालक बड़े आनन्द से उस घास में घूमने लगे।

कृष्ण उस बाग के सौन्दर्य को देखकर बड़ा खुश हुआ। ताड़ के पेड़ ऐसे उठे

जैसे वे पाताल से निकल रहे हों, उनके काले शरीर, फण से सिरों के कारण वे खेलते कूदते नाग से लगते थे। उनके ताड़ का रंग, काला रंग मिलकर, अजीब-सा रंग बन गया था। उनमें से अच्छी गन्ध भी आ रही थी। कृष्ण ने बलराम से कहा—"भैय्या, तुम पेड़ पर चढ़कर ताड़ के फल गिरा दो। मैं उन फलों को खाना चाहता हूँ। गौव्वों को भी उन्हें खिलायेंगे।"

"चढ़ने में बड़ी देरी लगेगी। मैं पेड़ों के तने पकड़कर हिलाता हूँ। जो

फल गिरें उन्हें तुम सब उठा लेना।" गोपकुमारों से यह कहकर बलराम एक एक पेड़ को जोर से हिलाने लगा। ताड़ के फल धड़ाधड़ गिरने लगे।

फलों के गिरने की ध्वनि धेनुक राक्षस के कानों में पड़ी। गधे के आकार में वह भयंकर राक्षस अपने ही जैसे हजार साथियों को लेकर, जहाँ बलराम और कृष्ण थे, वहाँ आया। उसे देख गोपालक सब घबरा गये। जब इस प्रकार गधे आ रहे थे, तो ढ़ेर-सी धूल उड़कर आकाश में बादलों की तरह छा गई। जब वे रेंकने लगे, तो सारा आकाश गूँज उठा। गधों के झुण्ड को रोकने के लिए बलराम बिना किसी शस्त्र के, उनके सामने खड़ा हो गया। बलराम के पास आते ही, धेनुक ने पिछले पैर उठाकर जोर से बलराम को दुलत्ती मारी। बलरान ने उन पैरों को पकड़कर जोर से उठाकर उस गधे को दूर फेंक दिया। धेनुक का शरीर ताड़ के पेड़ों से टकराकर लहूलुहान हो गया और पेड़ों पर से इस कारण और भी फल गिरे।

बलराम ने फिर और गधों को पकड़ा। उनको पिछले पैरों से पकड़कर, उनको

ताड़ के पेड़ों पर दे मारा। उसके साथ कृष्ण ने भी उन राक्षसों को मारा। सारा ताड़ का बाग ताड़ के पेड़ों और राक्षसों के शवों से भर गया। बाकी गोपालकों ने उन दोनों के सामर्थ्य की प्रशंसा की। वह ताड़ का बाग जो बड़ा भयंकर लगता था, राक्षसों की मृत्यु के कारण बड़ा मनोहर लगने लगा।

एक बार जब गोपालक भाण्डीवर प्रान्त में गौव्वें चरा रहे थे प्रलम्ब नाम का राक्षस एक गोपालक के रूप में उनमें आ मिला। गोपालक हरिण का खेल खेलने के लिए जत्थों में बँट गये। कृष्ण और श्रीधाम एक तरफ़ थे। प्रलम्ब बलराम के साथ था। इस तरह आधे आदमी कृष्ण की ओर आ गये और आधे श्रीधाम की ओर। खेल यह था कि भाण्डीरवटवृक्ष को लक्ष्य मानकर हरिण की तरह कूदते वहाँ पहुँचना था। उस खेल में कृष्ण का जत्था जीता। श्रीधाम के पक्षवाले हारे। जो हार गये थे, उनको जीतने को अपनी पीठ पर लादकर पेड़ तक ले जाना था।

इसलिए प्रलम्ब बलराम को पीठ पर चढ़ाकर कहीं ले गया। तुरत वह अपने राक्षस के आकार में आ गया और वह आकाश में उड़ने लगा। बलराम को अचरज हुआ। उसे जब न सूझा कि क्या किया जाये, उसने कृष्ण को आवाज़ दी। "देख क्या रहे हो, उसकी खबर क्यों नहीं लेते हो?" कृष्ण ने कहा। तुरत बलराम ने जोर से राक्षस के सिर पर मुका मारा। तुरत राक्षस का सिर फूट गया और वह जमीन पर जा गिरा। प्रलम्ब के मारने के बाद बलराम का नाम बलदेव भी पड़ा।

# अरण्य पुराण

[१०]

मौवली ने चमड़ा निकालना खतम किया। "अब हमें इसे कहीं रखकर, ढंगरों को हाँककर ले जाना होगा। जरा हमारी मदद तो करो, अकेला।"

अन्धेरा होते होते वे निकले। गाँव पहुँचते समय उनको मशालें दिखाई दीं। मन्दिर से घंटों और शंखों की ध्वनि आ रही थी, द्वार के पास गाँव के आधे लोग उसकी प्रतीक्षा करते खड़े थे।

"मैंने शेरखान को मारा जो है, शायद इसीलिए यह सब हो रहा है।" मौवली ने सोचा।

पर उस पर पत्थर बरसाये जाने लगे। "धोखेबाज भेड़िये का लड़का, जंगली पिशाच जल्दी चले जाओ। अगर चले न गये, तो पुजारी तुमको फिर भेड़िया बना देगा। बलदेव चलाओ गोली, चलाओ बन्दूक।" गाँववाले जोर जोरसे चिल्लाये।

बलदेव की बन्दूक चली और किसी बछड़े की कराहने की ध्वनि हुई।

"देखा भाई जादू? वह गोली से भी बच सकता है, जो बछड़ा मरा है, वह तुम्हारा ही है बलदेव।" ग्रामवासियों ने कहा।

"यह सब क्या है?" मौवली ने घबराकर कहा।

"तुम्हारे भाइयों और भेड़ियों में कोई फर्क नहीं मालूम होता। इसका यही मतलब है कि ये लोग तुम्हें अपने यहाँ से निकाल देना चाहते हैं।" अकेला ने कहा।

अन्तिम पृष्ठ

पुजारी तुलसी माला हिलाते हुए चिल्लाया "भेड़िये और भेड़िये के लड़के चले जाओ।"

"पहिले मुझे मनुष्य बताकर भेज दिया और अब भेड़िया कहकर जाने के लिए कह रहे हो, चलो चलें अकेला।" मौवली ने कहा।

एक स्त्री भीड़ की ओर भागी भागी आयी, वह मेस्सुवा थी।

"बेटा, ये कह कहे हैं कि तुम जादूगर हो, जब चाहो, तब जन्तु बन जाते हो। ये जो कह रहे हैं, उस पर मेस्सुवा ने रो रोकर कहा। मुझे यकीन नहीं होता, फिर भी चले जाओ। नहीं तो ये लोग तुम्हारी जान ले लेंगे।"

"पीछे हटो, मेस्सुआ नहीं तो हम तुम्हें भी पत्थरों से मार देंगे।" लोग चिल्लाने लगे।

एक पत्थर आकर मौवली के मुँह पर लगा। उसने हँसकर कहा—"पीछे हटो, मेस्सुआ यह वैसी ही एक कहानी है, जो शाम के समय पेड़ के नीचे बैठकर वे सुनाते हैं। आज्ञा दो। मैं झुण्ड को बहुत तेज़ी से दौड़ाने जा रहा हूँ। तुम पीछे हटो। मैं जादूगर नहीं हूँ। अच्छा मेस्सुआ...."

फिर उसने अकेला को पशुओं झुण्ड हाँकने के लिए कहा। भैंसे घर पहुँचने की जल्दी में थे। अकेला के चिल्लाने से

पहिले ही वे बवंडर की तरह द्वार में से भागे। लोग तितर बितर हो गये।

"गिनकर देख लो, कहीं मैंने एक दो ले नहीं ली हों। अब मैं तुम्हारी भैंसे नहीं चराऊँगा। बड़ों को, छोटों को सबको नमस्ते। मेस्सुआ को देखकर मैं यह नहीं कर रहा हूँ.... नहीं, तो भेड़ियों को लाकर तुम्हारे गाँव की गलियों में शिकार के लिए छोड़ता। वे तुम्हारी खबर लेते।" कहता मौवली मुड़ा और अकेला के साथ निकल पड़ा।

आकाश में तारे देखकर उसे बड़ी खुशी हुई। "अब मुझे मनुष्यों के पिंजड़ों में सोने की नौबत न आयेगी। शेरखान का चमड़ा लेकर चलो हम चलें। गाँव की तरफ हम जायेंगे ही नहीं। मेस्सुआ ने मुझे बड़े प्यार से देखा था।

इतने में चन्द्रोदय हुआ। मैदान में चान्दनी, चान्दी की तरह बिखर-सी गई। उस चान्दनी में ग्रामवासियों को एक विचित्र दृश्य दिखाई दिया। मौवली सिर पर कुछ रखकर चला जा रहा था। उसके पीछे दो भेड़िये चल रहे थे। यह देख, गाँववालों ने जाकर, मन्दिर के घंटे और तेज़ी से बजाये। शंख और जोर से बजने

लगे। मेस्सुआ रोयी। बलदेव अपने जंगल के अनुभव नमक मिर्च लगाकर सुना रहा था। उसने यह भी कहा कि उसने स्वयं अकेला को पिछली टाँगों पर खड़े होकर मनुष्य की तरह बोलते देखा था।

मौवली दोनों भेड़ियों को साथ लेकर जब उस चोटी पर पहुँचा, जहाँ भेड़ियों की सभा होती थी, तो चन्द्रमा अस्त हो चुका था। वे भेड़ियानी की गुफा में गये।

"मनुष्यों ने मुझे अपने झुण्ड से भगा दिया है माँ....शेरखान का चमड़ा लाया हूँ।" मौवली ने कहा।

भेड़ियानी उठकर आयी। चमड़े की ओर उसने बड़े सन्तोष से देखा। "जब वह तुम्हारे लिए आया था, तभी मैंने तुम से कहा था....तुम ने अच्छा काम किया, बेटा।

"अच्छा किया भाई....तुम्हारे बिना हमारा यहाँ मन नहीं लग रहा है।" कहता झाड़ियों में से बघेल आया।

मौवली ने पत्थर पर शेर का चमड़ा फैलाया और उसके चारों ओर बाँस की खूटियाँ गाड़ दीं। अकेला आकर उस पर लेट गया फिर उसने वैसा ही कहा जैसा कि मौवली के पहिली बार लाये जाने पर कहा था। "देखो, भेड़ियों देखो....अच्छी तरह देखो।"

अकेला जब से सरदार न था, तब से झुण्ड को काफी हानि हुई थी। बाकी भेड़ियों ने अकेले के साथ मौवली को भी सरदार बनने के लिए कहा। परन्तु मौवली माना नहीं।

"मुझे मनुष्यों ने अपने झुण्ड से अलग कर दिया है और भेड़ियों ने अपने झुण्ड से। मैं अकेला ही शिकार करूँगा।" मौवली ने कहा। (अभी है)

# ६४. वाहगी घाटी में शिलायुग

न्यूगिनी में वाहिगी घाटी सुन्दर पक्षियों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ हज़ारों लोग, प्रस्तर युग की सभ्यता में जी रहे हैं। वे अभी प्रस्तर उपकरणों का ही उपयोग कर रहे हैं। उनका शेष संसार से ३५ वर्ष पहिले कोई सम्बन्ध न था। चित्र में चिम्बू नदी दिखाई दे रही है।

Photo by Devidas Kasbeker

पुरस्कृत परिचयोक्ति

इसको पाकर मैं खुश हो जाती !

प्रेषक : आर. सी. श्रीवास्तव - लखना

Photo by Anant Desai

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

ये हैं मेरे जीवन साथी !!

प्रेषक :
आर. सी. श्रीवास्तव - लखना

# फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून १९६७ :: पारितोषिक १०)
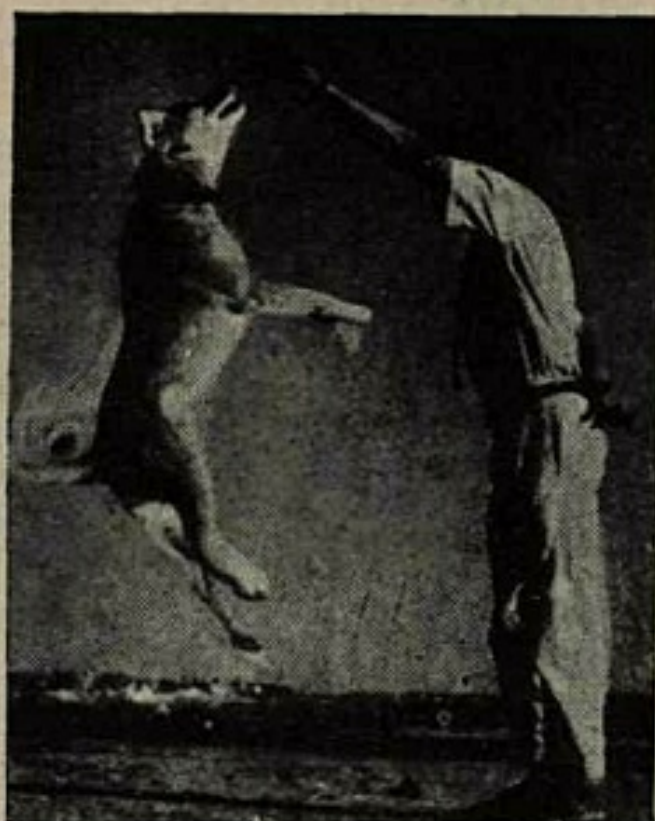
## कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ अप्रैल १९६७ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

## अप्रैल – प्रतियोगिता – फल

अप्रैल के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: इसको पाकर मैं खुश हो जाती !

दूसरा फ़ोटो: ये हैं मेरे जीवन साथी !!

प्रेषक: आर. सी. श्रीवास्तव,
दीक्षित मोहला, लखना, जिला - इटावा

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'